कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास
को समर्पित

वार्षिक मूल्य : 100 रुपये

वर्ष 54 अंक : 5 मार्च 2008 मूल्य : 10 रुपये

ग्रामीण महिला सशक्तिकरण

रोज़गार समाचार

साप्ताहिक

क्या आप सरकारी/सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम/कर्मचारी चयन आयोग/संघ लोक सेवा आयोग/
रेलवे भर्ती बोर्ड/सशत्र सेनाओं/बैंकों में रोज़गार तलाश रहें हैं ?

रोज़गार समाचार आपका श्रेष्ठ मार्गदर्शक है। यह विगत तीस वर्षों से नौकरियों के लिए सबसे अधिक बिकने वाला साप्ताहिक है। आप भी इसके सहभागी बनें।

आपका हमारी वेबसाइट :

employmentnews.gov.in

पर स्वागत है, जो कि

- नवीनतम प्रौद्योगिकी से विकसित है।
- उन्नत किस्म के सर्च इंजिन से युक्त है।
- आपके प्रश्नों का विशेषज्ञों द्वारा शीघ्र समाधान करती है।

रोज़गार समाचार/एम्प्लाएमेंट न्यूज की प्रति के लिए निकटतम वितरक से संपर्क करें।

व्यापार संबंधी पूछताछ के लिए संपर्क करें :

रोज़गार समाचार, पूर्वी खण्ड 4, तल 5, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली।

फोन : 26182079, 26107405, ई-मेल : enabm sa@yahoo.com

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मंत्रालय

भारत सरकार

Cir./EN-SP-3/08

KH-03/08/02

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 54 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 48

फाल्गुन – चैत्र 1929, मार्च 2008

वरिष्ठ सम्पादक

कैलाश चन्द मीना

सम्पादक

ममता रानी

संपादकीय पत्र–व्यवहार

वरिष्ठ संपादक, कुरुक्षेत्र

कमरा नं. 655 'ए' विंग,

गेट नं. 5, निर्माण भवन

ग्रामीण विकास मंत्रालय

नई दिल्ली–110011

दूरभाष : 23061014, 23061952

फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास

वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in

ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)

एन.सी. मजुमदार

व्यापार प्रबंधक

जगदीश प्रसाद

दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

ई–मेल : pdjucir_jcm@yahoo.co.in

आवरण एवं सज्जा

संजीव सिंह और अशोक जोशी

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

कुरुक्षेत्र

इस अंक में

★ महिला सशक्तिकरण में शिक्षा का महत्व	प्रतापमल देवपुरा	4
★ महिलाओं की स्थिति पर वैश्वीकरण का प्रभाव	डॉ. अंजलि गुप्ता	7
★ कृषि कार्यों में महिलाओं की भूमिका	ममता भारती	11
★ ग्रामीण महिलाओं का स्वरोजगार : रेशम उद्योग	सत्यभान सारस्वत	13
★ आर्थिक विकास में महिलाओं का योगदान	एस.एल. बैरवा	16
★ ग्रामीण विकास और महिला रोजगार	सुदीप कुमावत	19
★ पशुधन: ग्रामीण गरीबों का अपना एटीएम	संदीप कुमार	23
★ ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में कृषि	गिरीश चन्द्र पांडे	26
★ सरकारी किसान क्रेडिट कार्ड – उपयोगिता व प्रगति	प्रो. संदीपसिंह मुंडे एवं डॉ. रजनी वशिष्ठ	30
★ कृषि विकास में विपणन और भाण्डागार	जयश्री जैन	33
★ भारत में भूमि सुधार कार्यक्रम का एक मूल्यांकन	डॉ. रमेश कुमार सिंह	37
★ पौष्टिक हरे चारे की उपज कैसे बढ़ाएं	डॉ. अंशु राहल	41
★ विटामिन–सी से भरपूर अमरूद	डॉ. राकेश कुमार प्रजापति एवं डॉ. श्यौराज सिंह	45

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

संपादकीय

भारतीय समाज में नारी का स्थान पूजनीय रहा है। समाज तथा सभ्यता के विकास में महिलाओं का योगदान सर्वोपरि रहा है कभी वह बेटी बनकर परिवार की शोभा बढ़ाती है तो बहन बनकर भाइयों से दुलार करती है, वहीं मां बनकर संतान का लालन–पालन करती है। बड़ी होने पर भी उसका सम्मान कम नहीं होता और वह दादी–नानी बनकर गौरवमय जीवन जीती है। भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व में स्त्री का स्थान महत्वपूर्ण रहा है। जहां भी स्त्री के सम्मान को चोट पहुंची है वहां विकास नहीं विनाश हुआ है।

हमारे देश में 70 प्रतिशत लोग गांवों में बसते हैं। गांवों के विकास तथा प्रगति में महिलाओं के सबल हाथ इसके प्रतीक हैं। चाहे परिवार हो, खेत खलिहान का काम हो, सबमें महिलाएं कंधे से कंधा मिलाकर काम कर रही हैं। अधिकांश ग्रामीण महिलाएं पुरुषों से अधिक काम करती हैं। सुबह उठकर चक्की चलाती हैं, मवेशियों का दूध निकालती हैं, गोबर उठाकर साफ–सफाई करती हैं, बच्चों को स्कूल भेजती हैं, खेतों में खाना पहुंचाती हैं तथा पशुओं के लिए चारा लेकर आती हैं। इतना कठिन परिश्रम करने के बाद भी उनके चेहरे पर मुस्कान झलकती रहती है।

भारतीय प्रजातंत्र में ग्रामीण महिलाओं की भूमिका दिनोंदिन सशक्त होती जा रही है। लोकसभा, विधानसभा और ग्राम पंचायतों के चुनावों में मतदान का सबसे ज्यादा प्रतिशत महिलाओं का होता है या यह कहें कि सरकार बनाने में सबसे बड़ा योगदान ग्रामीण महिलाओं का ही है। ग्राम सभा से लेकर संसद तक में ग्रामीण महिलाओं का अनुपात बढ़ता ही जा रहा है। इस भागीदारी को बढ़ाने के लिए महिला आरक्षण विधेयक को पारित करने पर विचार किया जाना चाहिए ताकि ग्रामीण महिलाएं प्रशासन, राजनीति तथा न्यायपालिका में अपनी सक्षम सेवाएं देकर भारत को समृद्ध बनाने में अपना अधिक योगदान दे सकें।

ग्रामीण महिलाओं को आगे बढ़ाने के लिए सरकार को ऐसी योजनाएं बनानी चाहिए जिनका लाभ इन महिलाओं को मिल सके। इसके लिए अच्छी स्वास्थ्य सेवाएं, पौष्टिक खाना, शिक्षा की बेहतर व्यवस्था और शोषण को रोकने के लिए सख्त कानून की आवश्यकता है। बाल विवाह, दहेज प्रथा और कन्या भ्रूण हत्या जैसे जघन्य अपराधों को रोकने के लिए सरकार को अपने प्रयास तेज करने होंगे। सरकार व समाज के मिले–जुले प्रयासों से ही महिलाओं का विकास संभव है।

हमारा यह अंक ग्रामीण महिला सशक्तिकरण पर केंद्रित है। इसमें महिलाओं से संबंधित योजनाओं, कुटीर उद्योगों व महिला शिक्षा पर आधारित लेख शामिल किए गए हैं। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य व कृषि से संबंधित जानकारीपूर्ण लेख भी दिए गए हैं। आपकी प्रतिक्रियाओं का हमें इंतजार रहेगा।

मत सम्मत

जनवरी 08 का सम्पादकीय विशेष रूप से पसन्द आया। पर्यावरण पर प्रदूषण किस प्रकार भारी पड़ रहा है इसका विश्लेषण अच्छा है। आपके कथन 'पर्यावरण पर बढ़ता खतरा हमारी वर्तमान जीवन शैली का परिणाम है" से पूर्णतः सहमत हूं। पर्यावरण की अनदेखी करना एक बड़ी भूल है। हमें समय रहते चेतना होगा अन्यथा निकट भविष्य में पृथ्वी से मानव का ही नही, वरन सभी जीव–जन्तुओं का अस्तित्व नष्ट हो जायेगा।

आशीष कुमार पटेल, सिविल लाइन्स, उन्नाव

जनवरी 08 माह की पत्रिका में लेखक डॉ. नीरज कुमार राय द्वारा लिखे आलेख "गहराता पर्यावरण संकट" तथा राहुल धर द्विवेदी जी द्वारा लिखे आलेख "मानव विकास की कीमत देता पर्यावरण" में जिस प्रकार से पर्यावरण सम्बधी संकट को समझाया है वह वास्तव में देश के लिए आंख खोलने तथा सचेत होने का संकेत है। डॉ. एल. के इदनामी जी ने भी अपने आलेख "पर्यावरण संरक्षण आज की जरूरत" के माध्यम से आज की युवापीढ़ी, को समझाने का कार्य किया है। "आलेख उत्तराखण्ड में भूस्खलन संवेदनशीलता" भी काबिलेतारिफ है।

सुजीत कुमार, भागलपुर (बिहार)

कुरुक्षेत्र हिन्दी का मैं नियमित पाठक हूं। कुरुक्षेत्र पत्रिका को पढ़ने के कारण मुझे कई सारी प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता मिली है एवं ग्राम विकास के लिए समप्रित कई संस्थानों के बारे में जानकारी प्राप्त हुई है। मेरा विचार है कि इस पत्रिका को राज्य सरकारें जनप्रतिनिधियों जैसे निर्वाचित मुखिया, सरपंच, वार्ड सदस्या, प्रमुख, जिला परिषद अध्यक्ष को मुहैया कराएं ताकि इसे अध्ययन कर वे अपने कार्य में निपुणता लाए जिससे ग्राम विकास का कार्य तेजी से हो सके।

श्री शिवशंकर मिश्र, जिला– जहानाबाद (बिहार)

कुरूक्षेत्र, जनवरी 2008 'वृक्ष लगाओ–पर्यावरण बचाओ' अंक बहुत ही उपयोगी है। हमारी संस्कृति अरण्य (वन) संस्कृति कही जाती है। जैसे– जैसे वनों का नाश होगा भारतीय संस्कृति नष्ट होती जाएगी। एकशव दाह के लिए कम से कम 250 किलो मोटी लकड़ी चाहिए जो वृक्ष काट कर प्राप्त की जाती है। यदि अंतिम संस्कार की सारी क्रियाएं गैस या विद्युत शक्ति संचालित हों तो वृक्षों की कटाई रुकवाकर पर्यावरण को बचाया जा सकता है।

ठाकुर सोहन सिंह भदौरिया, बीकानेर–राजस्थान

जनवरी 2008 का अंक मुझे बेहद पसन्द आया। इसमें दिए गए सारे आलेख ज्ञानवर्द्धक हैं खासकर ओजोन परत का बढ़ता क्षरण, ग्लोबल वार्मिंग का धरती पर प्रभाव, लघु एवं सीमान्त कृषक तथा ग्रामीण विकास, थारू जनजाति, एक सांस्कृतिक पहचान, इस पत्रिका के बारे में मेरा विचार है कि कुरूक्षेत्र को देश में सभी जनप्रतिनिधियों को सरकार मुहैया कराये जिससे उन्हें विकास के बारे में जानकारियां मिल सकें तथा वे अपना कार्य प्रभावी तरीके से कर सकें।

प्रवीण कु.पाठक, ग्राम पो. करपी, अखल, बिहार

मैंने जनवरी 2008 के अंक का गहन अध्ययन किया। वास्तव में प्रदूषण एक भयावह समस्या है। आज पूरे विश्व में इस पर ध्यान दिया जा रहा है, चाहे बात जल प्रदूषण की हो या वायु प्रदूषण की। इन सभी प्रदूषणों से केवल मानव जीवन ही नहीं बल्कि पशु–पक्षी तथा वृक्षों पर भी भयावह प्रभाव पड़ता जा रहा है। कुरुक्षेत्र में स्वास्थ्य संबंधी लेख बहुत ही ज्ञानवर्द्धक होते हैं।

अजय कुमार शर्मा, गिरिड़ीह (झारखण्ड)

'वृक्ष लगाओ पर्यावरण बचाओ' के तहत संपादकीय ने दिल को छू लिया। वाकई प्रकृति ने हमारे देश में शुद्ध जल, वायु और हरी–भरी धरती दी है हमने उसे भौतिक सुख–साधनों की प्राप्ति के लिए अनेक–कल–कारखाने लगाकर प्रदूषित कर दिया है। वन संरक्षण के प्रति न केवल उदासीन हो गए बल्कि उनकी अंधाधुंध कटाई करके अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार रहे हैं। पौष्टिक तत्वों से भरपूर रोग निवारक अंगूर की जानकारी बहुत पसंद आई।

आखिद मजीद इराकी, जहानाबाद, (बिहार)

जनवरी 2008 का अंक प्राप्त हुआ पर्यावरण से सम्बन्धित होने के कारण यह अंक दिल को भा गया। वास्तव में वर्तमान में अगर देखा जाए तो पर्यावरण से जुड़ी समस्याएं ही दुनिया की सबसे अहम् समस्या है, अगर तुरन्त इस पर वैश्विक स्तर पर समाधान नहीं किया जायेगा तो विश्व को इसके भयानक परिणाम भुगतने होंगे। पर्यावरण की रक्षा के लिए अब क्रान्ति होनी चाहिए।

अरविन्द कुमार मौर्य, खोजवां बाजार, वाराणसी, उ.प्र.

मैं कुरूक्षेत्र की नियमित पठिका हूं। जनवरी 2008 अंक में पर्यावरण के समग्र आयामों को प्रकाशित किया गया। ग्लोबल वार्मिंग व इलेक्ट्रानिक वेव के विकिरण के कारण होने वाले पर्यावरणीय परिवर्तनों के कारण गौरैया जैसी चिड़िया भी आज हमसे दूर होती जा रही है। हमें पर्यावरण के बारे में सोचना होगा।

अंकिता मिश्रा, भोपाल–(म. प्र.)

मासिक कुरूक्षेत्र भी बहुत खूब,
दिन–प्रतिदिन निखरता जा रहा रंग–रूप।
देती है यह ज्ञान व सूचना की धूप,
मिटा देती है, अंधकार का विद्रूप।
सम्पादकीय का आखिर क्या कहना।
देखता हूं जब स्वास्थ्य पर लेख की दुनियां।
मानवाधिकार है जीवन का आधार,
सूचनाधिकार है भ्रष्टाचार पर प्रहार।
कुल मिलाकर उत्कृष्ट हैं सब लेख,
बेसब्री से प्रतीक्षारत रहती है कुरुक्षेत्र।

लखन रविदास,ग्राम पैसरा, जिला हजारीबाग, झारखंड

महिला सशक्तिकरण में शिक्षा का महत्व

प्रतापमल देवपुरा

महिला सशक्तिकरण की बात उठते ही यह चिन्तन आरम्भ होता है कि क्या वास्तव में महिलाएं कमजोर हैं जो उनके सशक्तिकरण की आवश्यकता है। प्रकृति ने तो महिलाओं को शारीरिक रूप में पुरुषों की तुलना में ज्यादा प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करके सृष्टि को जन्म देने जैसा मजबूत कार्य सौंप रखा है। परन्तु आज वैश्वीकरण के इस युग में परिस्थितियां अधिक बदल चुकी हैं। स्त्रियों ने अनेक मौकों पर अपनी शक्ति सम्पन्नता का अहसास कराया है। आज का समाज यह समझ चुका है कि विकास के कार्य में स्त्री की सहभागिता के बिना वांछित लाभ प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है।

संतान को जन्म देने व उनका पालन–पोषण करने, अपने अस्तित्व की रक्षा करने जैसे कुछ कारणों ने उसे पुरुषों पर निर्भर बना दिया। परिणामस्वरूप साधनों पर पुरुषों का अधिकार हो गया और महिला पिछड़ गई। घर बाहर के ज्यादातर मामलों में निर्णय पुरुषों द्वारा लिये जाते हैं और प्रायः दोहरे मापदण्ड अपनाये जाते हैं। उनकी शक्ति पर संदेह करके उन्हें ऐसे अवसरों से वंचित किया जाता है जिसमें कि वे अपनी क्षमता का पूर्ण प्रदर्शन कर सकती हैं। आंकड़े भी पुरुषों की तुलना में उन्हें पीछे बताते हैं। इसलिए संतुलन को बनाए रखने के लिए महिला "सशक्तिकरण" आवश्यक हो गया है। महिलाओं में व्याप्त अशिक्षा अधिकारों के प्रति उदासीनता, आर्थिक निर्भरता, तकनीकी अज्ञानता, स्वास्थ्य के प्रति उदासीनता, सामाजिक कुरीतियां एवं पुरुषों का महिलाओं पर प्रभुत्व आदि समस्याओं को दूर करना आवश्यक है। महिला सशक्तिकरण द्वारा समाज में नारी की अस्मिता के विकास में आने वाले अवरोधों के खिलाफ एक सामाजिक चेतना को जागृत करना है।

महिला सशक्तिकरण का उद्देश्य

महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य है सामाजिक सुविधाओं की उपलब्धता, राजनैतिक और आर्थिक नीति निर्धारण में भागीदारी,समान कार्य के लिए समान वेतन, कानून के तहत सुरक्षा एवं प्रजनन अधिकारों आदि को इसमें सम्मिलित किया जाता है। सशक्तिकरण का अर्थ किसी कार्य को करने या रोकने की क्षमता से है, जिसमें महिलाओं को जागरुक करके उन्हें आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षिक और स्वास्थ्य संबंधित साधनों को उपलब्ध कराया जाये। ताकि उनके लिए सामाजिक न्याय और पुरुष–महिला समानता का लक्ष्य हासिल हो सके। सशक्तिकरण का अभिप्राय सत्ता प्रतिष्ठानों में स्त्रियों की साझेदारी से भी है क्योंकि निर्णय लेने की क्षमता सशक्तिकरण का एक बड़ा मानक है। महिला सशक्तिकरण का आशय नारी के अपने अधिकार, सम्मान एवं योग्यता में संवर्धन की ओर अग्रसर करना हैं। महिलाओं को घर और बाहर दोनों में सुरक्षित करना है जिससे उन्हें जागरुक कर शक्तिशाली बनाया जा सके। महिला सशक्तिकरण की राष्ट्रीय नीति का उद्देश्य महिलाओं की प्रगति, विकास एवं आत्मशक्ति को सुनिश्चित करना है।

पढ़ाई लिखाई समय की मांग

महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया

स्त्रियों का सामाजिक, राजनैतिक और सार्वजनिक जीवन में प्रतिनिधित्व, दक्षता में अभिवृद्धि, सामाजिक सुरक्षा की प्राप्ति को हासिल करके उन्हें सशक्त बनाया जा सकता है। स्त्रियों का सशक्तिकरण उन्हें क्षितिज दिखाने का प्रयास है जिसमें वे नई क्षमताओं को प्राप्त कर स्वयं को नये तरीके से देखेंगी, घरेलू शक्ति संबंधों का बेहतर समायोजन करेंगी और घर एवं पर्यावरण में स्वायत्तता की अनुभूति करेंगी। लैंगिक असमानता, दहेज,सामाजिक मान्यता एवं समुचित शिक्षा, स्वास्थ्य आदि कुछ पहलुओं की दिशा में प्रयास करके ही महिला सशक्तिकरण किया जा सकता है। सशक्तिकरण की गतिविधियों के द्वारा नारी समाज के नव जागरण

और कल्याण की ठोस शुरूआत की जानी है। महिला सबलीकरण आधुनिक जीवन में सामाजिक न्याय की जड़ों को मजबूत करता है। समाज के रवैये में बुनियादी परिवर्तन लाकर महिलाओं के विवेक, सामर्थ्य एवं योग्यताओं को मिलने वाली चुनौतियों के बीच उन्हें प्रोत्साहित करना है। अपनी क्षमताओं को पहचान कर और उन्हें काम में लाकर व्यवहार में परिणित करना जिससे वे समाज के उत्थान में योगदान कर सकती हैं। महिलाओं का सशक्तिकरण एक लगातार चलने वाली गतिशील प्रक्रिया है, इसका मूल उद्देश्य यह है कि हाशिये के लोगों को मुख्यधारा में लाया जा सके और सत्ता–संरचना में भागीदार बनाया जा सके।

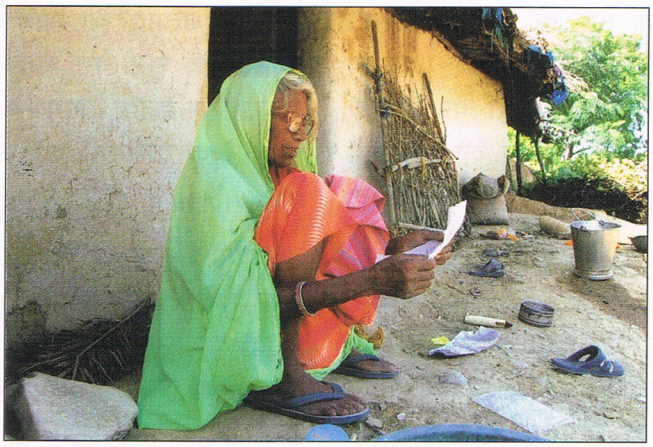

शिक्षा के बिना महिला सशक्तिकरण नामुमकिन

महिला शिक्षा की आवश्यकता

शिक्षा सामाजिक सशक्तिकरण के लिए पहला और मूलभूत साधन है। अब यह माना जाने लगा है कि शिक्षा ही वह उपकरण है जिससे महिला समाज में अपनी सशक्त, समान व उपयोगी भूमिका दर्ज करा सकती है। शिक्षा व्यक्ति के व्यक्तित्व व बुद्धि का विकास कर उसे आर्थिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक कार्यों को सम्पन्न करने के योग्य बनाती है। शिक्षा के आधार पर व्यक्ति में दक्षता, कौशल, ज्ञान एवं क्षमताओं का विकास होता हैं। शिक्षित महिला न केवल स्वयं लाभान्वित होती है बल्कि उससे भावी पीढ़ी भी लाभान्वित होती है। शिक्षा किसी भी प्रकार के कौशल की प्राप्ति एवं विवेकपूर्ण दृष्टिकोण के विकास के लिए पूर्णतया आवश्यक है। नारी की शिक्षा से उसका शोषण रोकने में मदद मिलेगी। निर्णय लेने की क्षमता सशक्तिकरण का एक बड़ा मानक है। शिक्षा का निर्णय लेने की क्षमता से घनात्मक एवं सार्थक संबंध है। शिक्षा द्वारा स्त्रियों के विभिन्न विषयों जैसे राजनीति, धर्म, समाज, आर्थिक एवं स्वास्थ्य पक्षों में आने वाले परिवर्तनों के बारे में जानकारियां प्राप्त करना आवश्यक है। न्यून शैक्षिक स्तर का सीधा प्रभाव है इस मानव पूंजी (महिला) का निम्न स्तरीय विकास, कुशलता का निम्न स्तर तथा श्रम बाजार में न्यून भागीदारी। महिलाओं की वास्तविक स्थिति से व्यक्ति, परिवार, समाज एवं राष्ट्र की सामाजिक, आर्थिक स्थिति प्रभावित होती है।

महिला शिक्षा की स्थिति

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त वर्ष 1951 में महिलाओं में साक्षरता दर 8.86 प्रतिशत थी जो सन् 2001 में बढ़कर 54.16 प्रतिशत हो गई है। आज भी देश में लगभग 30 करोड़ लोग निरक्षर हैं और उनमें अधिकतर महिलाएं हैं। सरकार द्वारा महिला शिक्षा और साक्षरता बढ़ाने के प्रयास से महिलाओं की साक्षरता 1981 में 29.75 प्रतिशत, 1991 में 39.29 प्रतिशत एवं 2001 में 54.16 प्रतिशत हो गई। फिर भी अभी तक 45.84 प्रतिशत महिलाएं साक्षर नहीं हैं। स्कूल छोड़ने वाले विद्यार्थियों में भी बालिकाओं की संख्या अधिक है। प्राइमरी स्तर पर ही लगभग 42 प्रतिशत बालिकाएं स्कूल छोड़ देती हैं। इतनी बड़ी संख्या में स्कूल छोड़ देने का सीधा परिणाम होता है, माध्यमिक व उच्च शैक्षणिक स्तर तक बहुत कम बालिकाओं का पहुंच पाना। विश्व भर में प्राथमिक शिक्षा से वंचित बच्चों का साठ फीसदी भाग लड़कियों का है। भारत में स्कूल जाने वाली आयु की 3 करोड़ बालिकाएं पढ़ने नहीं जा रही हैं। बिहार, उत्तर प्रदेश व राजस्थान ऐसे राज्य हैं जहां एक ओर लड़कियों की नामांकन दर कम है, वहीं दूसरी ओर उनके स्कूल छोड़ने की दर भी अधिक है। सभी शैक्षिक स्तरों पर बालिकाओं की नामांकन दर में यद्यपि क्रमशः वृद्धि हुई है परन्तु तुलनात्मक आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि लगभग सभी शैक्षिक स्तरों पर बालिकाओं का नामांकन बालकों से कम है।

महिला शिक्षा में बाधाएं

लोगों की परम्परागत व रूढ़िवादी मानसिकता, महिला शिक्षा को गैर जरूरी मानता है। लोग लड़कियों की शिक्षा का ध्यान देना आवश्यक नहीं समझते हैं। साथ ही लड़कियों को पराया धन समझने की सोच ही महिला शिक्षा पर निवेश को आर्थिक तौर पर बोझ मानती है। लड़कियों पर घरेलू दायित्वों का बोझ, बाल विवाह, अधिक शिक्षित होने पर अधिक दहेज, शिक्षा के लिए लड़कियों को घर से दूर जाने पर सुरक्षा आदि कई कारण उन्हें पढ़ाने के प्रति अभिभावकों को हतोत्साहित करते हैं। देश के पिछड़े, अनुसूचित जातियों तथा अल्पसंख्यकों के एक बड़े वर्ग की मानसिकता वर्तमान में भी परम्परावादी है, जो कि इन वर्गों में महिला साक्षरता की राह में एक बड़ा अवरोध है। न्यून शैक्षिक स्तर के कारण ही प्रायः महिलाएं

स्वयं के स्वास्थ्य के प्रति जागरुक नहीं हो पाती और इसी कारण उनके कल्याण से संबंधित उपलब्ध सुविधाओं का ज्ञान उन्हें नहीं है। यद्यपि सभी शैक्षिक स्तरों पर लैंगिक असमानता आज भी विद्यमान है परन्तु स्त्रियों की स्वयं की साक्षरता दर व शैक्षिक स्तर में हुई प्रगति को उत्साहजनक माना जा सकता है।

महिला शिक्षा का कानूनी पक्ष

संविधान की धारा 45 में प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने के उद्देश्य से निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा को राज्य का एक "नीति निर्देशक" सिद्धान्त घोषित किया गया है। महिलाओं को समान संवैधानिक अधिकार तो प्राप्त हैं पर उनके मार्ग में आने वाली कठिनाइयों को दूर कर उसे व्यावहारिक रूप से लागू किया जाए। अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा से संबंधित 93वें संविधान संशोधन अधिनियम को ईमानदारी के साथ लागू करते हुए इसे 6 वर्ष की आयु के समस्त बच्चों की अनिवार्य व निःशुल्क प्रारम्भिक शिक्षा के लक्ष्य को पूरा करने का गंभीर प्रयास किए जाने की आवश्यकता हैं। वास्तविकता यह है कि महिलाओं की अशिक्षा ही शिक्षा के लोकव्यापीकरण में सबसे बड़ी बाधा है। यदि महिला साक्षरता दर देश में अधिक होगी तो देश की कुल साक्षरता दर भी तुलनात्मक तौर पर अधिक हो जाएगी। देश में अनिवार्य शिक्षा कार्यक्रम को सख्ती से लागू किया जाए तथा अपनी लड़कियों को स्कूल न भेजने वाले अभिभावकों के प्रति कार्यवाही भी की जाए।

महिला शिक्षा के अनेक लाभ

आधुनिक और अत्यन्त स्पर्धाशील विश्व की चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए केवल शिक्षा का होना ही जरूरी नहीं है बल्कि एक अच्छे स्तर और विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता है। शिक्षा को एक ऐसे उपकरण के रूप में भी मान्यता दी गयी है, जिसकी सहायता से समाज में परिवर्तन व विकास के अभीष्ट लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है। अब महिला कार्यक्रमों का फोकस महिला कल्याण से हटकर महिला सशक्तिकरण की ओर हो रहा है। निश्चय ही सशक्त होने पर महिला अपने कल्याण के लिए दूसरे पर आश्रित नहीं बल्कि स्वयं समर्थ होगी। जब पुरुष शिक्षित होता है तो एक व्यक्ति शिक्षित होता है और जब स्त्री शिक्षित होती है तो एक पूरा परिवार शिक्षित होता है। क्योंकि शिक्षित महिला अपने समस्त परिवार की शिक्षा व्यवस्था में अहम् भूमिका का निर्वाह करती है। शिक्षित महिलाएं उत्पादकता, आय एवं आर्थिक विकास के साथ–साथ स्वस्थ एवं सुपोषित जनसंख्या के निर्माण में सहायक हैं। शिक्षित महिलाएं जागरुक रहकर बड़ी कुशलता के साथ सामाजिक दायित्वों को संभाल सकती हैं।

महिला शिक्षा के लिए व्यवस्थाएं

- ग्रामीण क्षेत्रों के सरकारी विद्यालयों में बुनियादी सुविधाओं तथा शैक्षिक उपकरणों का होना आवश्यक है जिससे लड़कियों में शिक्षा के प्रति रुझान में वृद्धि हो।
- महिला शिक्षा के लिए स्कूलों की घर से भौगोलिक दूरी को कम किया जाए तथा ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक गांव, टोलों, भागलों, में नवीन स्कूल खोले जाएं जिससे लड़कियों को अपने निवास स्थान के निकट ही शिक्षा प्राप्त हो सके।
- जनता में चेतना एवं जागरुकता का प्रसार करने के लिए स्थानीय समाज सुधारकों तथा स्वयंसेवी संस्थाओं की प्रभावशाली भूमिका हो सकती है इसलिए उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। पिछड़े तथा कमजोर वर्गों में बालिका शिक्षा के प्रति उत्साह जगाने के लिए आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए ठोस पहल करनी चाहिए।
- विद्यालयों में योग्य शिक्षकों की नियुक्ति कर शिक्षण कार्य को प्रभावी बनाया जाना चाहिए। शिक्षकों से शिक्षण कार्य के अतिरिक्त अन्य कार्य न लिया जाए और उन्हें निरन्तर प्रशिक्षित किया जाना भी आवश्यक है। महिलाओं को शैक्षिक रूप से और अधिक सुदृढ़ करना होगा, साक्षरता दर व विभिन्न शैक्षिक स्तरों पर उनकी स्थिति को निरन्तर उन्नत करना होगा, शिक्षा में लैंगिक असमानता को समाप्त करने हेतु प्रयासरत होना होगा तथा प्राथमिक शिक्षा पर और अधिक ध्यान देना होगा।
- दूर शिक्षा की व्यवस्था करने से विविध शैक्षिक पृष्ठभूमि वाले तथा विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में बिखरे विद्यार्थियों की एक बड़ी संख्या में उनकी आवश्यकता एवं सुविधा के अनुरूप ज्ञान, कौशल एवं अभिवृत्ति प्रदान करने की विधाएं अपनाना आवश्यक है।
- दूरस्थ शिक्षा में उच्च कोटि की अधिगम सामग्री के निर्माण, उत्पादन तथा प्रेषण में तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी माध्यमों का समुचित रूप से व्यापक प्रयोग करके महिलाओं को घर बैठे शिक्षित किया जा सकता है।
- महिला शिक्षा के प्रसार के लिए गांव–गांव में महिला समितियों का गठन करके उन्हें बालिकाओं की शिक्षा सुनिश्चित करने का दायित्व सौंपा जाए तो इससे भी महिला साक्षरता के अभियान को कुछ गति प्राप्त हो सकती है।

(लेखक पंचायती राज संस्थान में प्रशिक्षण अधिकारी हैं।)
ई–मेल : prnd99@rediffmail.com

महिलाओं की स्थिति पर वैश्वीकरण का प्रभाव

डॉ. अंजलि गुप्ता

वैश्वीकरण आज के युग की अपरिहार्यता है जिसके प्रभाव से विश्व का कोई भी देश अछूता नहीं रह सकता। वैश्वीकरण ने निस्संदेह भारतीय महिलाओं की स्थिति को प्रभावित किया है। वैश्वीकरण ने महिलाओं को एक वस्तु बना दिया है और उपभोक्तावादी संस्कृति धड़ल्ले से महिलाओं का प्रयोग (दुरूपयोग) एक वस्तु के रूप में कर रही है, विशेषकर इलेक्ट्रानिक मीडिया। कोई भी फैशन शो या विज्ञापन महिलाओं के अभाव में संभव नहीं है।

वैश्वीकरण ने आधुनिक युवा महिलाओं को ग्लोबल सिटीजन बना दिया है जो आत्मनिर्भर, स्वनिर्मित, आत्मविश्वासी है जिसने पुरुष प्रधान,चुनौती पूर्ण क्षेत्रों में भी अपनी योग्यता प्रदर्शित की है। वह केवल नर्स,शिक्षिका, स्त्री रोगों की डाक्टर न बनकर इंजीनियर, पायलट, वैज्ञानिक, तकनीशियन, सेना, पत्रकारिता जैसे नए क्षेत्रों को अपना रही है। वस्तुतः 21वीं शती महिला शती है तथापि भारतीय राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा पाटिल, श्रीमती सोनिया गांधी, सुश्री मायावती, सुश्री जयललिता, सुश्री ममता बैनर्जी, सुश्री मेधा पाटेकर, श्रीमती किरण मजुमदार शॉ, सुश्री इला भट्ट, श्रीमती वृन्दाकारत, श्रीमती सुधा मूर्ति, सानिया मिर्जा जैसी सामाजिक, राजनीतिक जीवन की ख्याति प्राप्त उंगलियों पर गिनी जाने वाली महिलाओं को छोड़ दिया जाए तो समाज की अधिसंख्यक महिलाओं की स्थिति में कोई विशेष उपलब्धि जैसा परिवर्तन नहीं आया है और निकट भविष्य में भी क्रांतिकारी परिवर्तन होगा, ऐसी संभावना भी नहीं है।

देश की सुरक्षा की प्रहरी महिलाएं

निर्विवाद रूप से यह सत्य है कि स्वाधीनता उपरांत न केवल शहरों अपितु ग्रामों में भी जागरुकता बढ़ी है। महिलाएं घर–परिवार की चारदीवारी से निकलकर घर और बाहर दोनों दायित्वों को निभा रही हैं और दोहरी जिम्मेदारी के बोझ तले पिस रही हैं। सार्वजनिक जीवन और क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति में कोई बड़ा सुधार नहीं हुआ है।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में घोषित किया गया है कि इसका लक्ष्य न्याय प्राप्ति व समस्त नागरिकों को स्तर और अवसर की समानता प्रदान करना है। राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं को उचित प्रतिनिधित्व देने के लिए संविधान के 73वें 74वें संशोधन द्वारा देशभर की पंचायतों व जिला परिषदों में 33 प्रतिशत स्थान आरक्षित करने का प्रावधान किया गया। 26 अक्टूबर, 2006 को घरेलू हिंसा, महिला आरक्षण अधिनियम पारित किया गया। सैद्धांतिक रूप से महिलाओं को कानून के सभी अधिकार प्राप्त हैं, जो पुरुषों को प्राप्त हैं, परन्तु व्यवहार में अनेक विसंगतियां हैं जिनकी भुक्तभोगी हममें से अधिकांश महिलाएं हैं (अपवादों को छोड़कर)। परिवार के अन्दर ही लड़कियों को भाइयों के समान शिक्षा, खेलकूद, खाने–पीने तक की छूट नहीं मिलती, लड़कों को बचपन से गैर–शाकाहारी मिलता है, लड़कियों को नहीं, लड़के देर रात तक मटरगश्ती करते हैं, लड़कियों को अंधेरा होने से पूर्व घर लौटना होता है अन्यथा जब तक लड़की घर वापस नहीं आती माता–पिता के प्राण अधर में लटके रहते हैं।

विवाह निश्चित करते समय लड़का दिखाकर उसकी मर्जी जानने की रस्म पूरी कर ली जाती है। बचपन से लड़कियों को शिक्षा–तुम्हें दूसरे (सास) के घर जाना है अतः सारी नैतिकता, संस्कार, रसोई बनाने, गृहस्थी संभालने का दायित्व उसी का है। शहरी लड़कियों को ग्रामीण लड़कियों की अपेक्षा अधिक छूट और सुविधाएं प्राप्त हैं। शादी के बाजार में नौकरीपेशा लड़कियों की मांग ज्यादा है, अतः अब पहले की अपेक्षा लड़कियों को काफी छूट मिल गई हैं। हालांकि नौकरीपेशा लड़कियों की समस्याएं घर–बाहर दोनों जगह बढ़ गई हैं। पग–पग पर वह तिरस्कृत, असुरक्षित और उत्पीड़ित हैं। नारी उत्पीड़न की घटनाएं द्रौपदी के चीर–हरण की

तरह बढ़ रही हैं। कोई भी महिला ऐसी नहीं है जिसने जीवन में कभी न कभी कोई उत्पीड़न, शोषण, हिंसा किसी न किसी रूप में सहन ना की हो। यद्यपि सभी पुरुष बलात्कारी, अभद्र, पिटाई करने वाले, अपहरणकर्ता, शोषणकर्ता नहीं हैं तथापि महिलाएं, सभी आयु में संभावित शिकार हैं। भारत में आईपीसी के अंतर्गत प्रतिवर्ष घटित कुल अपराध लगभग 6 प्रतिशत महिलाओं के प्रति होते हैं।

प्रतिवर्ष 31000 यातना मामले (पति व अन्य द्वारा) 28000 छेड़खानी के मामले, 14000 अपहरण के मामले, 14000 बलात्कार के मामले, दहेज प्रताड़ना संबंधी, 2800 मामले, एक दो मामले सती प्रथा।

लड़कियों और महिलाओं की स्थिति पर दिल्ली स्टेट कमीशन की रिपोर्ट रोंगटे खड़े करने वाली है–मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई तीनों मैट्रो शहरों से दोगुने बलात्कार के मामले दिल्ली में होते हैं। दस वर्ष से कम उम्र की बच्चियों के साथ बलात्कार पूरे देश से चार गुना अधिक, 88 प्रतिशत अपराध परिचितों और रिश्तेदारों द्वारा घटित और सबसे दुखद पहलू 89 प्रतिशत अपराध घर की परिधि में होते हैं। इस सबके बावजूद रोशनी की किरण यही है कि देश की विकसित अर्थव्यवस्था, 9 प्रतिशत विकास दर ने महिलाओं के समक्ष संभावनाओं के नए असीमित क्षेत्र खोल दिए हैं। एसोचैम व इको पल्स के सर्वेक्षण के अनुसार वर्ष 1998 से वर्ष 2004 के मध्य महिलाओं को मिलने वाले रोजगार में 3.35 फीसदी की वृद्धि हुई है। वहीं पुरुषों को इस मामले में 8 फीसदी का नुकसान उठाना पड़ा है। निजी सार्वजनिक क्षेत्र में महिलाओं की संख्या वर्ष 1998–47.74 प्रतिशत, वर्ष 2004–49.34 प्रतिशत थी। पुरुषों की संख्या वर्ष 1998–2.34 करोड़, वर्ष 2004–2.15 करोड़ थी।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की 'महिला वैश्विक रोजगार' रिपोर्ट के अनुसार समान काम के लिए अभी भी पुरुषों की तुलना में महिलाओं को वेतन कम मिलता है। विश्व के कुल 2.9 अरब रोजगारशुदा लोगों में महिलाओं की संख्या पहले से अधिक है। बड़ी संख्या में महिलाएं कम वेतन वाले कार्यों में लगी हुई हैं जैसे खेती। महिलाओं की कार्य क्षमता संबंधी निम्न आंकड़े आश्चर्यचकित कर देने वाले हैं–कुल आबादी में आधी होते हुए भी महिलाएं दो तिहाई काम करती हैं, पर उनके काम का एक तिहाई दर्ज हो पाता है। 70 प्रतिशत महिलाएं खेती के कार्य में संलग्न, विश्व के कार्य का 60 प्रतिशत कार्य महिलाएं सम्पन्न करती हैं। किन्तु केवल एक प्रतिशत विश्व भूमि पर महिलाओं को स्वामित्व प्राप्त है और विश्वव्यापी आय में केवल 10 प्रतिशत की भागीदारी है। विश्व के 10 खरब गरीबों में 60 प्रतिशत महिलाएं हैं तथापि आर्थिक रूप से कोई बहुत बड़ा सुधार महिलाओं की स्थिति में नहीं हुआ है। वस्तुतः किसी भी देश का विकास लगभग सभी क्षेत्रों में एवं नागरिकों का कल्याण महिलाओं की सक्रिय भागीदारी के बिना संभव नहीं है। जिन्होंने आधा आसमान सिर पर उठा रखा है उनकी मूलभूत संसाधनों तक कितनी पहुंच है और सामाजिक–राजनीतिक निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में कितनी सहभागिता है। महिलाओं की स्थिति विकास का एक प्रकार का संकेतक भी है। वर्ल्ड इकोनोमिक फोरम की रैंकिंग के अनुसार महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण के क्षेत्र में भारत का स्थान 115 नम्बर पर है। श्रमशक्ति में महिलाओं की भागीदारी भारत, इंडोनेशिया, मलेशिया जैसे देशों में सबसे कम है। संयुक्त राष्ट्र आर्थिक और सामाजिक आयोग (एशिया प्रशांत के लिए) के वार्षिक आर्थिक सर्वेक्षण 2007 के अनुसार यदि भारत में महिलाओं की भागीदारी अमरीका के बराबर हो जाए तो देश का सकल घरेलू उत्पाद 4.2 प्रतिशत की दर से बढ़ेगा और वृद्धि दर 1.08 प्रतिशत बढ़ जाएगी जिससे अर्थव्यवस्था को 19 अरब डालर का लाभ होगा। महिलाओं के लिए रोजगार के अवसरों की सुलभता सीमित होने के कारण इस क्षेत्र को प्रति वर्ष 42 से 47 अरब डालर का घाटा उठाना पड़ रहा है। शिक्षा में लड़के–लड़की के बीच अंतर के कारण 16 से 18 अरब डालर का

अपराध रोकने के लिए सख्त कानून जरूरी

आर्थिक नुकसान हो रहा है और यदि यह अंतर कम नहीं किया गया तो प्रतिवर्ष 30 अरब डालर की अतिरिक्त कीमत चुकानी होगी।

महिला विकास व अधिकारों की बात करना व्यर्थ है जब तक विश्व की आधी जनसंख्या को मूलभूत अधिकार प्राप्त ना हो। भारत में विश्व की जनसंख्या का 1/7वां हिस्सा है। लगभग 800 करोड़ में से 50 प्रतिशत महिलाएं हैं और उनकी आधी संख्या 20 वर्ष से नीचे है। भारत में प्रतिवर्ष लगभग 12 करोड़ कन्याओं का जन्म होता है जिसमें से डेढ़ करोड़ अपना प्रथम जन्म दिवस नहीं देख पाती हैं अथवा 5 वर्षों में 850000 अकाल मृत्यु को प्राप्त होती हैं। केवल 9 करोड़ कन्याएं अपना 15वां जन्म दिवस मना पाती हैं। कन्याएं अनचाही होने के साथ–साथ अपने परिवार पर बोझ मानी जाती हैं। इसी कारण लड़कियों का शोषण जन्म से पूर्व प्रारंभ होकर मृत्युपर्यंत चलता रहता है। कन्या को जन्म से शैशवावस्था, किशोरावस्था, वैधव्य सभी अवस्थाओं में शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक भेदभाव का शिकार होना पड़ता है। लिंग निर्धारण की उच्च तकनीक, चिकित्सीय नैतिकता के अभाव के कारण लाखों बेटियां जन्म से पहले ही खो जाती हैं। अनैतिक मेडिकल व्यवसायिकता ने 1000 करोड़ के देशव्यापी व्यवसाय को बढ़ावा दिया है। लिंग निर्धारण परीक्षण व कन्या भ्रूण हत्या के संबंध में सरकार को ठोस कदम उठाना होगा, कानूनों को सख्ती से क्रियान्वित करना होगा, उनका सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक शोषण रोकना होगा, यही समय की मांग है। मुस्कराती लक्ष्मी ही आधुनिक भारत का भविष्य है। जहां दक्षिण एशिया में मातृत्व मृत्युदर 1,00,00 लाख पर 540 की मृत्यु हो जाती हैं वहीं भारत में प्रति 5 मिनट में एक महिला की मृत्यु। एक अनुमान के अनुसार प्रतिवर्ष 1,36,000 महिलाएं गर्भावस्था संबंधी जटिलताओं से मृत्यु को प्राप्त होती हैं। यूरोप में पूरे वर्ष में मातृत्व संबंधी जितनी मृत्यु होती हैं उतनी भारत में केवल एक सप्ताह में, तथापि महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए कोई विशेष योजना या आंदोलन नहीं हैं।

आज के वैज्ञानिक,वैश्वीकरण के युग में भी अधिकतर मृत्यु इसलिए होती हैं क्योंकि अधिकांश महिलाएं समय पर अस्पताल नहीं पहुंच पाती अन्यथा 70 प्रतिशत महिलाओं को बचाया जा सकता है। टिटनेस और एनीमिया आज की महिलाओं के दो बड़े शत्रु हैं क्योंकि शिशु जन्म के उपरांत भी महिलाओं को बहुत कम अथवा कोई देखभाल उपलब्ध नहीं होती। शबाना आजमी के शब्दों में –(8 मार्च, महिला दिवस के अवसर पर) सुरक्षित मातृत्व समाज के विकास का सूचक है और भारत माता का जीवन दांव पर है। गर्भवती महिलाओं में 54 प्रतिशत एनीमिक हैं। एक लाख जीवित जन्मदर पर 301 मातृ मृत्यु दर। केवल 43 प्रतिशत जन्म प्रशिक्षित स्टाफ की देखरेख में होते हैं। आज के दौर में भी महिलाओं के समक्ष बड़ी गम्भीर चुनौती है। उसे गृहिणी के साथ–साथ अपने को प्रोफेशनली भी सिद्ध करना है। दोनों मोर्चों पर उससे असीमित अपेक्षाएं हैं और अनेकों सीमाएं भी। विशेषकर भारतीय समाज जो परंपरावाद पुरातनता और आधुनिकता में सामंजस्य स्थापित कर रहा है। परिवार व समाज में महिला की भूमिका को लेकर यद्यपि पुरुष मनोवृत्ति में कुछ परिवर्तन आया है। वैश्वीकरण ने भारत की 50 प्रतिशत जनता के गृह कार्यों के प्रति दृष्टिकोण को बदला है।

वैश्वीकरण ने महिलाओं की स्थिति को भी प्रभावित किया है। जीवन के हर क्षेत्र में महिलाएं अपनी योग्यता, क्षमता के बल पर झंडे गाड़ रही हैं। देश के विकास में उनकी भागीदारी ने उन्हें अबला, कमजोर से सबला और समर्थ सिद्ध कर दिया है। आज की रोल मॉडल इंदिरा नूयी, ओपरा विनफ्रे, किरण देसाई, नैंसी पिलोसी, सिगोलेने रॉयल, हिलेरी क्लिंटन जैसी महिलाएं है तथापि समाज की बहुसंख्यक महिलाएं मूलभूत मानवाधिकारों से वंचित हैं, निरक्षर हैं, शोषित और पीड़ित हैं। आज भी महिला की भूमिका प्रमुखतः पत्नी, माता, पति की अनुगामिनी के रूप में ही है चाहे उसकी शिक्षा और कैरियर का स्वरूप कुछ भी क्यों न हों। महिला के चिन्तन का केन्द्र बिन्दु पति और परिवार ही है।

ईंधन, चारा, पानी, तीनों जिम्मेदारी पूरी करने का दायित्व महिला पर ही है। जाति प्रथा, बाल विवाह व दहेज यह तीनों महिला की दुरावस्था के सबसे बड़े कारण हैं। आज के समय में भी महिला को अपने शरीर पर, अपनी जननात्मक क्षमता पर अधिकार नहीं है। पति का घर स्त्री की सबसे निरापद जगह माना जाता है पर वहीं वह सबसे अधिक उत्पीड़ित होती है। पति ही उस पर अत्याचार करता है, पति ही उसके अधिकार के टुकड़े–टुकड़े कर देता है। वस्तुतः वैश्वीकरण के बावजूद परिवार और समाज में महिला भूमिका को लेकर कोई विशेष परिवर्तन पुरुष मनोवृत्ति में नहीं हुआ।

भारत में महिलाओं की स्थिति मिली जुली है। बहुत कम महिलाओं को अपनी स्थिति पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त है। अधिकतर महिलाएं काफी सीमा तक अपने पिता, पति अथवा भाइयों, बेटों पर आश्रित हैं। अधिकांश महिलाओं की स्थिति में कोई सुधार अथवा परिवर्तन नहीं हुआ है। महिला विकास के लिए समाज और पुरुषों के दृष्टिकोण के साथ–साथ स्वयं महिलाओं को भी अपना दृष्टिकोण परिवर्तित करना होगा कि उनका घर, परिवार से पृथक एक मनुष्य के रूप में भी अस्तित्व है और ऐसा व्यापक स्तर पर जागृति, शिक्षा और आर्थिक सशक्तिकरण द्वारा ही संभव है।

(लेखिका राजनीति शास्त्र विभाग में वरिष्ठ रीडर हैं।)
ई–मेल : rcgup@hotmail.com

प्रगतिशील
भारत को सलाम
गणतंत्र के
उपलब्धिमय 58 वर्ष
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
davp 22202/13/0125/0708
KH-03/08/02

कृषि कार्यों में महिलाओं की भूमिका

ममता भारती

हमारे देश में आज भी करीब 70 फीसदी आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती हैं। उसमें से अधिकतर लोग कृषि कार्यों पर निर्भर हैं। शहरों में कार्यशील महिलाएं दफ्तर जाती हैं या कई कारोबार चलाती हैं। गांवों में महिलाएं घर व बच्चों को संभालने के साथ–साथ खेती के काम में हाथ बंटाती हैं। वे हर कदम पर किसानों का साथ निभाती हैं। क्यारी से खेत की तैयारी तक बुवाई से कटाई तक, रोग, कीट व खरपतवारों के नियंत्रण में, फसलों को गहाना या उनको ले जाना, महिलाओं से कुछ भी छूटा नहीं है। खेत खलिहानों से गोदामों तक हर जगह उनका पसीना बराबर बहता है। अतः कृषि में महिलाओं की भागीदारी बहुत महत्वपूर्ण है।

यह बात अलग है कि कृषि कार्यों में लगी महिलाओं की अपनी कोई अलग पहचान नहीं है, क्योंकि अर्थव्यवस्था की चाबी प्रायः पुरुषों के पास रहती है। अतः वे चाह कर भी तरक्की की राह में उतनी आगे नहीं बढ़ पातीं। उनकी अशिक्षा, अनभिज्ञता, उदासीनता, रूढ़ियां और उनके अंधविश्वास रास्ते के रोड़े साबित होते हैं। ऐसी स्थिति में राष्ट्र के चहुंमुखी समग्र विकास के लिए कृषि कार्यों में लगी ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण पर ध्यान दिया जाना बहुत जरूरी है।

इसके लिए उनकी सूचना और शिक्षा का पुख्ता व बेहतर इंतजाम हो ताकि उनमें जागरुकता आए। साथ ही साथ खेती के दौरान आने वाली समस्याओं को पहचान कर उनको आसानी से हल करने की दिशा में कारगर उपाय किए जाएं। समय और श्रम बचाने वाली तकनीकी जानकारी सरल भाषा में रोचक ढंग से उन तक पहुंचाई जाए। इस बारे में काफी कुछ हुआ भी है। उदाहरण के लिए आकाशवाणी का कृषि एवं गृह एकांश इस दिशा में मील का पत्थर सिद्ध हुआ है। परिणास्वरूप कृषि के सहायक उद्योग धंधे बहुत से देहाती इलाकों में बढ़े हैं। अतः जरूरत जनभागीदारी बढ़ाने व ललक जगाने की है। दूरदराज के पिछड़े हुए इलाकों में अभी बहुत कुछ किया जाना जरूरी है, ताकि अंधेरे कोने भी रोशन हो सकें।

महिला समूह द्वारा मसालों की पैकिंग

डेरी पशुपालन, पोल्ट्री, मछली पालन, रेशम कीट पालन, चटनी, अचार, मुरब्बे यानी कि खाद्य परिरक्षण, हथकरघा, दस्तकारी जैसे कामों में ग्रामीण महिलाएं पीछे नहीं हैं, लेकिन जो गांव शहरी इलाकों के नजदीक हैं वहां की महिलाओं को इस नव जागृति और चेतना का लाभ अधिक पहुंचा है, बहुत–सी महिलाओं ने तो अपनी सफलता के रिकार्ड कायम किए हैं।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश में एक जिला है बागपत। वहां की बड़ौत तहसील की उषा तोमर ने मिसाल कायम की है। करीब 7 वर्ष पहले अपने इलाके की 15 महिलाओं को ले कर उषा ने स्वयं सहायता के लिए एक छोटा–सा समूह बनाया था। अब वह बढ़ कर कई गुना हो गया है जो पूरे जिले में एक आदर्श मिसाल बन गई है। इस समूह ने बड़ा अनोखा काम किया है। एक महिला कृषि प्रसार विद्यालय का गठन किया जो कृषि से जुड़ी महिलाओं को नई–नई जानकारी देता है।

इसके बेहतर परिणाम मिले। पुराने औजारों व पुराने तरीकों से छुटकारा मिला। समय,शक्ति व श्रम की बरबादी रुकी। सोचने का ढंग बदला। कम लागत व कम वक्त में ज्यादा फायदा हुआ। क्षेत्र में फूलों व नई सब्जियों की खेती बढ़ी। सदस्य महिलाओं के परिवारों की आमदनी बढ़ी, उनका जीवन स्तर सुधरा है। यह देखकर दूसरी महिलाओं को भी प्रेरणा मिली है। समूह की सदस्याओं को देख–देख कर गांव की दूसरी महिलाएं भी पत्र–पत्रिकाओं, रेडियो, टी. वी. आदि से जानकारी लेने में अधिक रुचि लेने लगी हैं। जो पढ़ना–लिखना नहीं जानती थीं, वे भी शर्म, संकोच और भय छोड़ कर अब अक्षर ज्ञान लेने की कोशिश कर रही हैं।

इसी तरह एक दो नहीं देश के ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक समूह चल रहे हैं। वे अपनी थोड़ी–थोड़ी बचत इकट्ठी करके जरूरतमंद सदस्याओं की मदद करते हैं। मार्च 2007 तक 68575 समूह बने थे जिनमें 10 लाख महिलाएं सदस्य थीं। दरअसल, ग्रामीण महिलाओं की व्यस्त दिनचर्या, जरूरतें व

समस्याएं शहरी महिलाओं की तुलना में अलग होती है। रोजमर्रा के काम आसान बनाने वाली सुविधाजनक घरेलू मशीनें देहातों में नहीं के बराबर हैं। अतः सूरज की पहली किरण के साथ उनका कार्य शुरू हो जाता है। पशुओं को चारा देना, दूध दुहना, गोबर पाथना, घर आंगन लीपना, नौकरों की रोटी बनाना, खाना खेतों तक पहुंचाना, फिर उधर से जलावन लाना। इसके अलावा अनाज, दाल व मसाले साफ करना, कुएं से पानी लाना जैसे अनेक काम उन्हें रोज करने होते हैं। शिक्षा, सूचना व मनोरंजन के अवसर उन्हें अपेक्षाकृत कम मिलते हैं।

वे खेती के कामों में करीब 55 फीसदी से भी ज्यादा का योगदान करती हैं, लेकिन इस सबके बावजूद उनमें से ज्यादातर के पास जमीनों के मालिकाना हक नहीं है। वे अपने निजी तथा खेती किसानी में फसल की बुवाई से उपज की बिक्री तक के फैसले खुद नहीं ले पातीं। साथ हीं वे अपने स्वयं के पोषण, स्वास्थ्य और मानसिक विकास आदि के बारे में ज्यादा कुछ नहीं कर पाती हैं। प्रायः वे अपने अधिकारों से वंचित रह जाती हैं या बेदखल कर दी जाती हैं और इस तरह से वे हाशिए पर चली जाती हैं किंतु अब गांवों में भी स्थिति सुधर रही है।

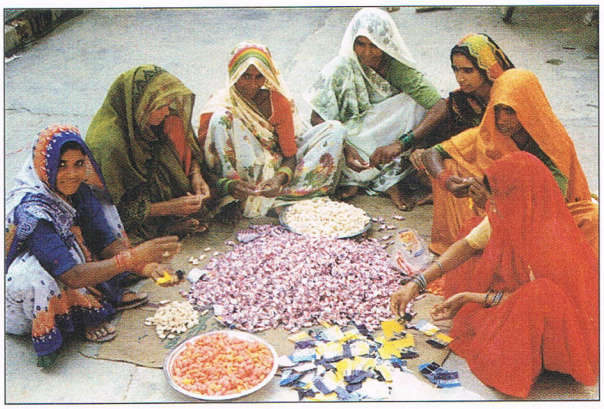

टॉफी रैपिंग करती स्वयं सहायता समूह की सदस्य महिलाएं

खासकर भूमिहीन परिवारों में तथा मजदूरी करने वाली अनपढ़ व गरीब महिलाओं की दशा तो ज्यादा खराब है। पूरे परिवार का पोषण करके अन्नदाता कही जाने वाली महिलाएं अक्सर खुद भूखी और प्यासी रहती हैं। देहाती इलाकों में रहने वाली पढ़ी लिखी जागरुक महिलाएं इस स्थिति में बदलाव लाने में बहुत बड़ा योगदान कर सकती हैं। वे औरों को जगा सकती हैं। कृषक महिलाओं को वैधानिक सुरक्षा दिलाने में मदद कर सकती हैं। हमारे देश में अनेक गैर सरकारी संगठन भी इस दिशा में काम करके अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

स्वयं सिद्धा, राष्ट्रीय महिला कोष तथा अन्य कल्याणकारी कार्यक्रमों का लाभ उठा कर महिलाएं अपना काम धंधा शुरू कर सकती हैं तथा स्वावलंबी हो सकती हैं। दरअसल, कल्याण मंत्रालय द्वारा महिलाओं के विकासार्थ सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तिकरण और जैंडर यानी लैंगिक न्याय आदि के लिए प्रयास तो चल ही रहे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि कृषि कार्यों में लगी महिलाएं जागरुक होकर स्वयं आगे आएं और देशभर में सरकार की ओर से चलाई जा रही कल्याणकारी योजनाओं का लाभ उठाएं। गांव की शिक्षित युवतियां, शिक्षिकाएं तथा पंचायतों में चुनी गई महिलाएं अपने आसपास के इलाकों में नवचेतना एवं जागृति लाने का काम कर सकती हैं। हमारे देश में कई महिलाओं ने स्वयं व्यक्तिगत तौर पर तथा संस्थागत रूप से अनेक प्रेरणास्पद, अनुकरणीय एवं उल्लेखनीय कार्य किए हैं।

कृषि मंत्रालय के स्तर से भी निरंतर इस बात के प्रयास किए जा रहे हैं कि कृषि कार्यों में लगी ग्रामीण महिलाओं की स्थिति में भी तेजी के साथ सुधार हो। हमारे देश में 503 कृषि विज्ञान केन्द्र काम कर रहे हैं। इनके द्वारा प्रवीणता विकास हेतु कृषि कार्यों में लगी महिलाओं के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाते हैं। वर्ष 2006–07 में 2,39,76 महिलाओं तथा 64,394 ग्रामीण लड़कियों को फसल उत्पादन, बागवानी, गृह विज्ञान, पशुधन उत्पाद एवं प्रबन्धन की उन्नत तकनीक का प्रशिक्षण दिया गया था। आवश्यकता आगे बढ़कर पहल करने तथा रुचि लेकर लाभ उठाने की है ताकि गांव देहात की महिलाओं का समग्र विकास तथा कल्याण हो सके। किसान परिवारों की आम महिलाएं यह जान सकें कि स्वच्छता, समुचित शिक्षा, पोषण, वैज्ञानिक दृष्टिकोण जागरुकता से अशक्तता दूर होती है और इन्हें प्राप्त करना असंभव नहीं हैं।

हमारे देश में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली की ओर से कृषि में महिलाओं के लिए एक राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्र भी उड़ीसा में काम कर रहा है।

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

सर्वप्रिय योजना

राष्ट्रीय सहकारी उपभोक्ता संघ (एनसीसीएफ) द्वारा आम आदमी विशेषकर निम्न आय समूह से संबंधित लोगों के लाभ के लिए चुनिंदा वस्तुओं के वितरण हेतु सर्वप्रिय योजना चलाई जा रही है, जिसमें चार किस्म की दालों, नमक, चाय, नहाने का साबुन, कपड़े धोने के साबुन, अभ्यास पुस्तिकाओं, खाद्य तेल और टूथ पेस्ट के वितरण के लिए जुलाई, 2000 में शुरू किया गया था। योजना पर सभी राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों से अच्छी प्रतिक्रिया प्राप्त नहीं हुई लेकिन हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल जैसे कुछ राज्य समय–समय पर इस योजना के तहत आपूर्ति प्राप्त कर रहे हैं। (पसूका)

ग्रामीण महिलाओं का स्वरोजगारःरेशम उद्योग

सत्यभान सारस्वत

भारत जैसे विकासशील देश में, महिलाओं के विकास के बिना 'विकास' सम्भव ही नहीं हो सकता हैं। भारत की जनसंख्या का लगभग 72 प्रतिशत जनाधार ग्रामीण है। अर्थात् भारत अब भी ग्रामों में ही बसता है, जहां से कृषि आधारित उद्योगों के माध्यम से न केवल भरण–पोषण का भौतिक आधार मिलता है, अपितु रोजगार का सुलभ साधन भी मिलता है। 2001 की जनसंख्या के अनुसार भारत की आबादी में 50 प्रतिशत महिलाएं ही हैं, भले कुछ राज्यों में कन्या भ्रूण हत्याओं के कारण अब महिलाओं का अनुपात घट रहा है जो कि निश्चय ही एक चिन्ता का विषय है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर वर्ष 2007–2008 के केन्द्रीय बजट में महिलाओं पर केंद्रित परियोजनाओं के लिए 8795 करोड़ रुपये के बजट का प्रावधान किया गया है।

समुचित शिक्षा के अभाव में ग्रामीण महिलाओं के सामने रोजगार की विकट समस्या है और वे पुरुष प्रधान भारत देश में अब भी स्वतंत्रता के 60 वर्ष के बाद, घर की चार दिवारी में रहकर परतंत्रता के लिए बाधित है अर्थात् महिलाएं अपनी मूल–भूत आवश्यकता के लिए अपने साथी पुरुष पर ही निर्भर हैं। महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए उन्हें स्वरोजगार का साधन कुटीर उद्योग के रूप में उपलब्ध कराने के लिए एक सकारात्मक विकल्प "रेशम–उद्योग" है।

रेशम उद्योग एवं रेशम कीटपालन कृषि आधारित एक कुटीर उद्योग है, जिसमें महिलाओं को स्वरोजगार का साधन उपलब्ध है। वस्त्र मंत्रालय, भारत सरकार से उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार रेशम उद्योग एवं रेशम कीटपालन में 60–70 प्रतिशत भागीदारी ग्रामीण महिलाओं की है जो कि इस "स्व–रोजगार" के माध्यम से आत्मनिर्भर हो सकती है।

रेशम उद्योग अथवा रेशमी वस्त्रों का भौतिक आधार कच्चे रेशम की उपलब्धता है जो कि रेशम कीटपालन द्वारा प्राकृतिक रूप में ही उपलब्ध हो सकता है। रेशम कीटपालन में, शहतूत की खेती, शहतूती रेशम अर्थात् सामान्य रेशम के लिए अनिवार्य है क्योंकि शहतूत की पत्ती खाकर ही रेशम का कीड़ा रेशम बनाता है। दूसरे अवयव में रेशम कीटपालन घरों में रहकर करने के लिए मानव श्रम की आवश्यकता अनिवार्य है और यदि रेशमी धागे बन जाते हैं तो धागाकरण के माध्यम से धागा निर्माण अर्थात् रेशमी कोशों के धागा बनाने की प्रक्रिया में भी मानवीय श्रम आवश्यक है। इस पूरे उद्योग में महिलाओं की सहभागिता से उद्योग को चलाने में सफलता मिल सकती है।

भारत के 50,000 गांव में, लगभग 60,00,000 लोग रेशम कीटपालन व रेशम उद्योग के माध्यम से अपना जीवनयापन कर रहे हैं। इनमें कुछ परम्परागत राज्य हैं, जैसे उत्तर भारत में जम्मू–कश्मीर, दक्षिण में कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु पूर्व में पश्चिम बंगाल एवं पश्चिम में राजस्थान व गुजरात जहां रेशमी वस्त्रों का निर्माण अपनी विभिन्न कला कृतियों से किया जाता है।

भारत के कुछ राज्यों में प्राकृतिक संसाधनों के अभाव में, जैसे कृषि योग्य भूमि की अनुपलब्धता, कृषि योग्य भूमि है किन्तु सिंचाई के साधनों की अनुपलब्धता, ऐसे राज्यों में भी रेशम उद्योग एक स्वरोजगार का सशक्त माध्यम है। जिसका सकारात्मक पहलू है कि शहतूत का पौधा एक 'कल्पतरू' की तरह है जो कि असामान्य परिस्थितियों में भी जीवित रह सकता है। समुद्रतल से लेकर 9000–10,000 फीट की ऊंचाई तक शहतूत रोपण हो सकता है। उत्तर भारत में, जोशीमठ (बद्रीनाथ के पास) उत्तराखण्ड राज्य में लगभग 10,000 फीट की ऊंचाई पर शहतूत का वटवृक्ष उपलब्ध है, जिसे वहां की पहाड़ी महिलाएं 'कल्पवृक्ष' की तरह पूजती हैं।

महिला समिति की कीट पालक से वैज्ञानिक चर्चा करते हुए (साथ में रेशम कोशा)

पहाड़ी क्षेत्र की महिलाओं के सामने 'बेरोजगारी' की विकट समस्या है। न तो वे खेती कर सकती हैं न आवागमन के अभाव में कोई व्यापार कर सकती हैं। ऐसे में रेशम कीटपालन एक सशक्त विकल्प के रूप में महिलाओं को स्वरोजगार का साधन उपलब्ध है। उत्तराखण्ड में, देहरादून जनपद के अनेकों गांव ऐसे हैं, जहां महिलाएं रेशम कीटपालन कर रेशमी धागों का निर्माण कर रही हैं। दूरस्थ पहाड़ी क्षेत्रों में बागेश्वर (अल्मोड़ा), रुद्रप्रयाग (चमोली गढ़वाल) में महिलाएं रेशमी धागाकरण के साथ–साथ छोटे–छोटे हथकरघे पर रेशमी वस्त्रों का निर्माण भी कर रही हैं।

महिला रेशम समितियां

उत्तराखण्ड में महिला सशक्तिकरण का एक अनूठा उदाहरण है जहां पर महिलाओं ने अपने आत्मविश्वास को पूर्णरूप से सशक्त रखकर अपने को आत्मनिर्भर बनाने के लिए 'महिला रेशम' समितियों का निर्माण किया है। देहरादून से मात्र 25 किमी. दूर भगवानपुर गांव में लगभग 20 महिलाएं स्वयं महिला समिति चलाती हैं, उसकी प्रधान भी एक महिला है तथा सरकार व संगठन दोनों में ही महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित की जाती है। महिला समिति द्वारा विगत वर्षों में रेशम कीटपालन से आर्थिक लाभ तालिका में दर्शाया गया है।

अनुमानित उत्पादन के आंकड़ों में, शुद्ध आय के लिए लगभग 30 प्रतिशत की कमी उन संसाधनों पर खर्च की जाती है, जो ये महिलाएं, रेशम बीज (कीटाणुओं) के क्रय में, शहतूत बागान, शहतूत वृक्षों के रखरखाव पर खर्च करती हैं। सामान्यतः वर्ष में दो बार रेशम कीटपालन अपने घरों के पास उपलब्ध पेड़ों व शहतूत बागानों से करती है, कुछ राज्यों में जैसे उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड व हिमाचल प्रदेश में समितियों को राज्य सरकार अनुबन्ध के माध्यम से राजकीय रेशम फार्मों से शहतूत पत्ता उपलब्ध कराते हैं।

महिला समिति द्वारा रेशम कीटपालन

वर्ष	रेशम बीज (कीटाणु) की संख्या (अनुमानित)	रेशम कोशा की उत्पादन (किग्रा.)	आर्थिक लाभ (रुपये में)	शुद्ध आय (रुपये में)
2001–02	2000	850.00	106250.00	74375.00
2002–03	2200	900.00	112500.00	78750.00
2003–04	2500	1000,00	125000.00	87500.00

रेशम धागाकरण में महिलाएं

रेशम कोशा (कोकून) के उत्पादन के बाद लगभग 80 प्रतिशत कोशाओं को रेशमी धागाकरण के उपयोग में लाया जाता है–शेष 20 प्रतिशत बीजोत्पादन के काम में आते हैं। रेशम धागाकरण ग्रामीण महिलाओं को एक पूर्णकालीन उद्योग के रूप में कार्य देता है अथवा स्वरोजगार का साधन होता है। इसमें मौसम में कोशाओं के उपलब्ध होने के बाद कोशाओं को उबालकर (कोषोमरान्त) सुखाकर 3–4 माह तक रख सकते हैं फिर महिलाएं अपनी सुविधानुसार चरखे पर अथवा तकली पर धागा बना सकती हैं। कर्नाटक के सिदल–गट्ठा (कोलार) में सैकड़ों महिलाओं में आजीविका साधन रेशम धागाकरण है तो उत्तराखण्ड के रुद्रप्रयाग, चमोली जनपदों में महिलाएं सर्दी के मौसम में घर में तकली पर धागा बनाकर अपनी आजीविका साधन उपलब्ध कराती हैं।

कालीन –दरी के निर्माण में महिलाएं

सामान्य जानकारी के लिए घरों में प्रयोग होने वाली 'दरी' व विशेष अवसर पर उपयोग होने वाले गलीचे (कालीन) पूजा–पाठ

युवा महिला रेशमी धागाकरण का प्राशिक्षण लेते हुए

में प्रयोग लाने वाले 'आसनों' में रेशमी धागों का उपयोग होता है। कश्मीर के पोम्पोर–पुलवॉमा में रेशमी–गलीचों व दरी का निर्माण महिलाएं करती हैं। यहां पर दोनों ही वर्ग में महिलाएं विशेषकर गरीब मुस्लिम महिलाओं का रोजगार का साधन ही कालीन अथवा गलीचे बनाना है। वाराणसी व भदोई (वाराणसी संभाग) में हजारों की संख्या में महिलाएं कालीन–निर्माण में लगी हैं। यहां यह स्पष्ट करना भी आवश्यक है कि कालीन बनाने में ऊनी धागों का भी जहां एक ओर उपयोग होता है वहां रेशमी धागे (सिल्क वेस्ट) से कालीन का निर्माण होता है, जो कि तुलनात्मक रूप में कोमल व मनमोहक कालीन होते हैं।

रेशम बीजोत्पादन में महिलाएं

भारत सरकार से उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार रेशम बीज उत्पादन में महिलाओं की 70–80 प्रतिशत भागीदारी 'स्वरोजगार' के रूप में होती है। भारत के परम्परागत राज्य, जहां रेशम का बहुत उत्पादन होता है, जैसे–कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु–वहां रेशम कीट बीजोत्पादन का लगभग 80 प्रतिशत कार्य गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा

होता है जो कि सरकार से तकनीकी अनुबन्ध के अनुसार रेशम बीजोत्पादन करती है। इन संस्थाओं में कार्यकर्त्ता अथवा श्रमिक से लेकर वैज्ञानिक तक का कार्य महिलाएं ही करती हैं।

व्यावहारिक आंकड़ों के अनुसार रेशम बीज उत्पादन में 'रेशम कीटपालन' में लगभग शत–प्रतिशत महिलाएं कार्य करती हैं। कहीं–कहीं तो महिलाएं अपनी समिति बनाकर बीजोत्पादन का कार्य कर रही हैं।

ग्राम प्रमुख वरिष्ठ महिला 'रेशम उद्योग की जानकारी देते हुए

रेशमी–साड़ी निर्माण में महिलाएं

रेशमी साड़ी महिलाओं का एक ऐसा विशेष परिधान है, जिसे पहनकर महिला अपने को गौरवान्वित अनुभव करती हैं। असम में सुनहरी रेशम, की मूंगा की साड़ी वहां की परम्परा तो है ही, समाज में प्रतिष्ठा का साधन भी है। इन साड़ी निर्माण में महिलाओं के लिए पूर्णकालीन स्वरोजगार उपलब्ध है।

गुजरात के सूरत–जनपद में रेशमी साड़ी में जरी का काम महिलाएं करती हैं तो राजस्थान में 'कैथून' में कोटा डोरिया साड़ी के निर्माण में महिलाओं की सहभागिता है। बनारस में साड़ी के विपणन हेतु 'सजा–धजा' में महिलाओं की भूमिका बड़ी ही महत्वपूर्ण है। यहां तक बड़े–बड़े घराने की महिलाएं भी अपने घर व कार्य के बाद रेशमी साड़ियों को तैयार करने में अपना सहयोग देकर अतिरिक्त आय को साधन का स्रोत बनाती हैं।

निष्कर्ष में, रेशम उद्योग एक ऐसा कुटीर उद्योग है, जिसमें हर वर्ग की, विशेषकर ग्रामीण महिलाओं को "स्व–रोजगार" आदि का समान अवसर है। कुछ क्षेत्रों में ये महिलाएं–पुरुषों की तुलना में रेशम प्रौद्योगिकी में अपनी निपुणता साबित कर चुकी हैं। पुरुष प्रधान भारत देश में महिलाओं को आत्मनिर्भर एवं अपने आत्मविश्वास से जीवनयापन करने के लिये–रेशम उद्योग एवं रेशम कीटपालन एक सही दिशा में,सही कदम है व 'स्वरोजगार का साधन भी है।

(लेखक राष्ट्रीय रेशमकीट बीज परियोजना (वस्त्र मंत्रालय) में संयुक्त निदेशक हैं।)

महिलाओं में सशक्तिकरण के लिए योजनाएं

महिला और बाल विकास मंत्रालय महिलाओं के चहुंमुखी सशक्तिकरण के लिए अनेक कार्यक्रम और स्कीमें कार्यान्वित कर रहा है, जैसे प्रशिक्षण और रोजगार कार्यक्रम को सहायता (एसटीईपी–स्टेप), स्वावलम्बन कार्यक्रम, स्वयंसिद्धा परियोजना और स्व–शक्ति परियोजना। इसके अलावा, महिलाओं की आर्थिक सृजन की क्षमता और आर्थिक सुरक्षा को मजबूत बनाने के लिए दूसरे विभागों की संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (इस कार्यक्रम के तहत 40 प्रतिशत लाभ महिलाओं के लिए निर्धारित है), स्वर्ण जयंती शहरी स्वरोजगार योजना, शहरी क्षेत्रों में महिला और बाल विकास (डीडब्ल्यूसीयूए) इत्यादि जैसी अन्य स्कीमें भी हैं। महिलाओं को भी स्व–सहायता समूहों के रूप में संगठित होने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है और इन समूहों को संसाधन प्रदान किए जा रहे हैं। (पसूका)

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। **कुरुक्षेत्र** में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख वरिष्ठ संपादक, **कुरुक्षेत्र** कमरा नं. 655 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

आर्थिक विकास में महिलाओं का योगदान

एस.एल.बैरवा

यह सर्वविदित है कि हमारे देश की जनसंख्या का आधा हिस्सा महिलाएं हैं। जीवन के हर क्षेत्र में महिलाओं के योगदान को स्वीकार किया गया है क्योंकि महिला एवं पुरुष विकास रूपी गाड़ी के दो पहिए हैं। महिलाएं राष्ट्र के विकास में उतना ही महत्व रखती है जितना पुरुषों का है। अतः देश का समग्र विकास महिलाओं की भागीदारी के बगैर संभव नही हैं। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 1,02,70,15,247 है। इसमें 53,12,77,078 पुरुष तथा 49,57,38,169 महिलाएं हैं। जो कुल आबादी का 48.27 प्रतिशत है। आधी आबादी यानी भारतीय महिलाओं के विकास की ओर बढ़ते कदम आज पूरी दुनिया के लिए मिसाल बन चुके हैं। आज भारतीय महिलाओं ने देश दुनिया के विभिन्न क्षेत्र में अपना सम्मानित स्थान बनाया है। आज महिलाएं बेहतर रोजगार के लिए दुनिया के किसी भी कोने में जाने के लिए तैयार हैं। आज ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जहां महिलाओं ने अपनी उपस्थिति दर्ज न कराई हो। राष्ट्र के विकास की अग्रदूत बनी महिलाओं द्वारा देश ही नहीं वरन् विदेशों में भी अपने राष्ट्र का परचम लहराया है। समुद्र की गहराइयों से लेकर पहाड़ों की ऊंचाइयां भी इन कदमों के सामने छोटी पड़ गई। राष्ट्र की आंतरिक तथा बाह्य गतिविधियां इनसे अछूती न रह पायीं।

लहुसन प्याज और नकदी फसलों की ग्रेडिंग करती महिलाएं

स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व महिलाओं की स्थिति अत्यन्त शोचनीय बनी हुई थी। वह शोषण, शिकार तथा कुप्रथा जैसी विसंगतियों का शिकार थी। समाज में कई प्रकार की रुढियां, अंधविश्वास व्याप्त थे जिनमें बाल विवाह, सतीप्रथा आदि अन्य कुप्रथायें प्रमुख थीं। नारी को भोग की वस्तु माना गया। महिलाओं के प्रति रूढ़िवादी एवं परम्परागत सोच स्त्री को पिता, पति या पुत्र का "आश्रित" मानते हुए उसे मुख्य रूप से घर की चारदीवारी तक सीमित रखा गया। जिसका प्रमुख कारण तात्कालिक सामाजिक विचार का पिछड़ापन तथा स्त्रियों का अज्ञानता के बंधन में जकड़ा होना था।

स्वतंत्रता के बाद से ही नारी के स्वरूप में तेजी से परिवर्तन आया है। जिस देश में नारी को घर की दहलीज से बाहर निकलने की आज्ञा नहीं थी, उसी देश में आज नारी पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम कर रही है। वह घर की चारदीवारी से निकलकर अंतरिक्ष तक जा पहुंची है। जिस देश की नारी जाग्रत, शिक्षित और गुणवती होती है वही देश संसार में सबसे अधिक उन्नति करता है। इसी विचारधारा को ध्यान में रखकर हमारे यहां स्त्रियों को पुरुषों के बराबर अधिकार प्रदान किये गये और इनके लिए शिक्षा की समुचित व्यवस्था की गयी, तब किसी ने सोचा भी न था कि यह पिछड़ा हुआ नारीवर्ग पुरुषों से भी आगे निकल जायेगा।

विगत दशकों में हमारे देश में कृषि, उद्योग, यातायात, संचार, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि सभी क्षेत्रों में काफी तेजी से विकास हुआ है। जिसमें महिलाओं के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष योगदान को नकारा नहीं जा सकता है। आज महिलाएं पुरुषों के साथ सरकारी तथा निजी क्षेत्र में कंधे से कंधा मिलाकर कार्य कर रही हैं। महिलाओं ने अनेक अवसरों पर अपनी शक्ति सम्पन्नता का एहसास कराया है। आज पुरुष प्रधान समाज यह समझ चुका है कि विकास कार्यों में महिलाओं की सहभागिता के बिना वांछित लक्ष्य प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। महिलाओं को विकास की मुख्य

धारा से जोड़े बिना किसी समाज, राज्य एवं देश के आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। महिला कल्याण व सशक्तिकरण को राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक पोषण मिला। महिलाओं की स्थिति में सुधार तथा इनको विकसित समाज की मुख्यधारा में जोड़ने के लिए विधायी उपाय, कल्याणकारी योजनाएं तथा विकास कार्यक्रमों का संचालन किया गया। महिलाओं को अपने अधिकार तथा दायित्वों के प्रति सजग करने के लिए शिक्षा के समुचित अवसर उपलब्ध कराये गये, जिससे महिलाओं में स्वावलम्बन और आत्मनिर्भरता की भावना जाग्रत हुई है। महिलाएं समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन का स्वरूप लिए राष्ट्र की विकासधारा में सम्मिलित हो गई।

कुटीर उद्योग में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी

हाल ही के कुछ दशकों से महिलाओं ने बड़ी तादाद में घरेलू दायित्वों के अतिरिक्त कारखानों, बागानों, खदानों, सरकारी कार्यालयों, छोटे एवं बड़े पैमाने के उद्योगों, विनिर्माण एवं असंगठित क्षेत्र की उत्पादनशील गतिविधियों में अपनी पहचान बनाना प्रारंभ कर दिया है। भारत एक कृषि प्रधान देश है। जिसमें कृषि एक जीवन पद्वति है। जनसंख्या के दो तिहाई लोगों को जीविका प्रदान करने वाली कृषि देश की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार है। कृषि कार्य में जहां शारीरिक श्रमदान का प्रश्न है वहां 80 प्रतिशत कार्य महिलाएं ही करती हैं। कृषि में प्रत्यक्ष योगदान के बावजूद महिलाओं को कृषक की श्रेणी में नहीं रखा गया है। पुरुष भले ही कुछ समय हल चला लेता हो, लेकिन खेती के हर चरण में बुवाई, निराई से लेकर कटाई और अनाज घर ले आने तक हर काम महिलाएं ही करती हैं। सर्दी हो या गर्मी घुटनों तक कीचड़ पानी में खड़ी होकर वे खेतों को सींचती हैं तथा फसलों की देखभाल करती है। फसल कटाई, धान अलग करना, अनाज की सार संभाल करने के तमाम कार्य स्त्रियां ही करती हैं। फसलों एवं पशुओं की बीमारियों की रोकथाम, पशुधन के चारे पानी की व्यवस्था के अलावा जब पुरुष खेत खलिहान का काम करते हैं तब घर की देखभाल, बच्चों को संभालना और खेत पर खाना पहुंचाने का काम भी स्त्रियों के जिम्मे रहता है। गृह आधारित लघु एवं कुटीर उद्योगों में अधिकांश कार्य महिलाओं द्वारा ही सम्पन्न होता है। जैसे नमदा, दरी, रंगाई, छपाई आदि लघु उद्योगों में तथा बीड़ी, पापड़, अचार, ऊनी कपड़े आदि गृह उद्योगों में महिलाएं ही अधिक कार्य करती हैं।

महिलाओं के प्रत्यक्ष योगदान एवं सक्रिय भागीदारी के परिणामस्वरूप अनेक प्रकार के फलों, सब्जियों और अनाज के मामलों में भारत सबसे बड़ा उत्पादक देश बन गया है। सरकार द्वारा महिलाओं के लिए शिक्षा की समुचित व्यवस्था होने से महिलाओं में दक्षता, कौशल, ज्ञान एवं क्षमताओं का विकास हुआ है। महिलाएं विभिन्न योजनाओं व राष्ट्रीय कार्यक्रमों से जुड़ी, यथा संभव बहुमुखी विकास के मार्ग पर कदम बढ़ाया जिसमें वे कामयाब भी हुई हैं। महिलाएं अपनी बुद्धि, योग्यता के आधार पर सभी नौकरियों और व्यवसायों में आगे आने लगी हैं। लिपिक, शिक्षिका, अधिकारी, प्रशासनिक सेवाओं में तो महिलाएं अपने कदम जमा चुकी हैं इससे आगे पुलिस, इंजीनियरिंग, पायलट, चिकित्सा, सेना, नर्सिंग, पत्रकारिता, सौन्दर्य प्रसाधन, विशेषज्ञों आदि के रूप में भी उल्लेखनीय प्रगति प्राप्त कर ली है। खेलकूद, पर्वतारोहण के क्षेत्र शिक्षित महिलाओं से गौरवान्वित हुए हैं। एयरहोस्टस, रिशेप्सनिस्ट, सेल्सगर्ल्स, मॉडल, कला, नृत्य, संगीत आदि क्षेत्रों में महिलाओं का वर्चस्व स्थापित हुआ है। आज की महिलाएं केवल पत्नी, माता आदि सम्बन्धों के द्वारा ही अपना परिचय नहीं देती, बल्कि अपने आप को राष्ट्र के उत्तरदायी नागरिक के रूप में उपस्थित करती हैं।

आज 21वीं शताब्दी में प्रवेश करती हुई लाखों महिलाएं राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कार्यरत हैं। कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं बचा है, जहां महिलाओं ने देश का नाम रोशन न किया हो। वह राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, राज्यपाल, विधायक, सांसद, न्यायधीश जिलाधीश बनकर राष्ट्र का

संचालन कर रही है। इन्दिरा गांधी से लेकर तीजनबाई तक, अरूंधती राय, कल्पना चावला, शुभा मुद्गल, पी.टी. उषा, बरखा दत्त, किरण बेदी, कर्णम मल्लेश्वरी जैसी लाखों महिलाएं हैं, जिनकी पहचान उनके पति या पिता से नहीं बल्कि उनसे पिता या पति की पहचान है। महिलाओं ने इस पुरुष प्रधान समाज में यह सिद्ध कर दिया है कि वे किसी भी तरह पुरुषों से कम नहीं हैं। वे हर क्षेत्र में आगे आई हैं बात चाहे चांद पर जाने की हो या समुद्री गोताखोरों की, घर में दायित्व निभाने की हो या सीमा पर सुरक्षा के सभी स्थानों पर महिलाओं ने देश के विकास में महत्वपूर्ण सराहनीय योगदान दिया।

आज की इस पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में लगभग हर काम की एक कीमत देखी जाती है। राष्ट्रीय आय में समस्त व्यक्तियों की आय को जोडकर आंका जाता है। इसमें लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाता है। व्यक्तिगत आय का स्तर अधिक है तो आर्थिक कल्याण भी अधिक माना जाता है। अतः प्रत्येक महिला कुछ भी कार्य करती है तो वह आर्थिक विकास में बराबर की भागीदार है। यदि वह किसी सेवा या व्यवसाय में कार्यरत नही हैं और घर पर ही जिम्मेदारियां संभालती है, बच्चों का पालन पोषण करती है तो भी वह पुरुष को बाहर के विकास कार्यों के लिए मुक्ति प्रदान कर, उचित और अनुकूल वातावरण देकर, प्रेरित और प्रोत्साहित कर, भावी पीढ़ी को शिक्षित कर देश के आर्थिक विकास में अपनी भागीदारी का सफलतापूर्वक निर्वहन कर रही है। आर्थिक जगत में महिलाओं के इस प्रवेश ने सूक्ष्म स्तर पर परिवार निर्माण एवं व्यापक स्तर पर राष्ट्र निर्माण को गति प्रदान की है।

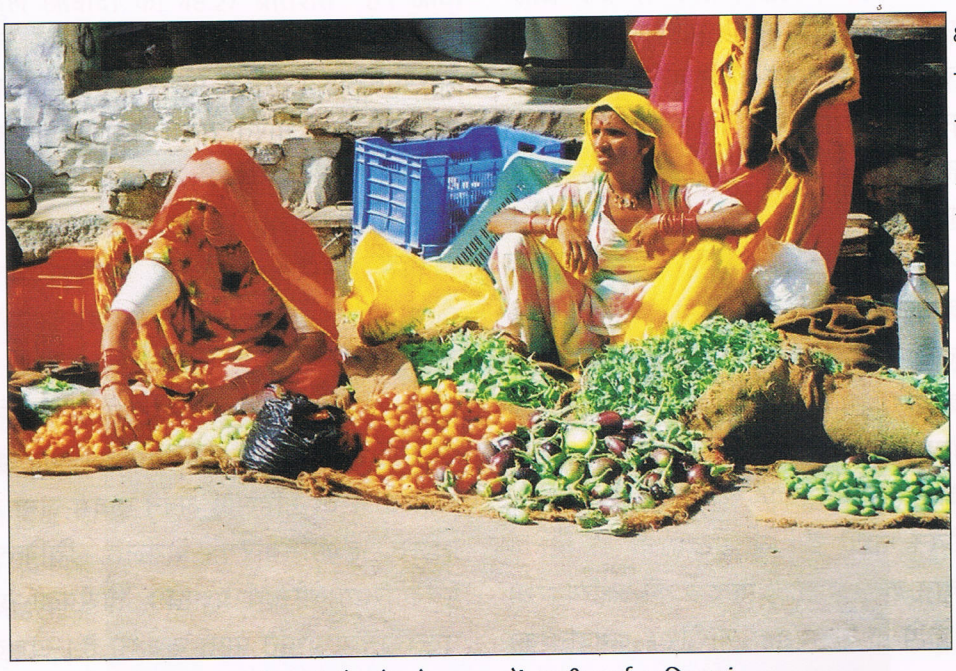

सब्जियां बेचने के काम में लगी हुई महिलाएं

स्वतंत्रता प्राप्ति से अब तक महिलाओं का सर्वांगीण विकास हुआ है। शिक्षा, रोजगार एवं व्यवसायों में महिलाओं का अनुपात बढ़ा है अर्थात आज भी महिलाएं आर्थिक, सामाजिक और बौद्धिक या मानसिक रूप से अधिक सक्षम, स्वतंत्र और प्रगतिशील हैं। लेकिन महिलाओं के विकास की प्रक्रिया क़दापि संतोषजनक नहीं है। अनेक ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक, सामाजिक कारणों से भारतीय महिलाओं की स्थिति कमजोर बनी हुई है तथा शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य एवं आर्थिक भागीदारी से सम्बंधित संकेतक में भी पुरुषों की तुलना में महिलाओं की स्थिति निम्नतर बनी हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों, पिछड़े इलाकों में एवं समाज के कमजोर वर्गों में तो महिलाओं की स्थिति और भी गंभीर है। शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं के विकास का अंतर चिन्ताजनक है। वर्ष 2001 में पुरुष साक्षरता दर 75.85 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 54.16 प्रतिशत है। आज भी देश में लगभग 30 करोड़ लोग निरक्षर हैं और उनमें भी अधिकतर महिलाएं हैं। आज भारत की अधिकांश महिलाएं अशिक्षा, अंधविश्वास, दरिद्रता एवं रूढियों से ग्रस्त हैं। केंद्र सरकार, राज्य सरकारें एवं गैर सरकारी संगठन इन समस्याओं को एक योजनाबद्ध तरीके से मिटाने के लिए प्रयासरत हैं।

आज सरकार महिलाओं के उत्थान, विकास और उन्हें सशक्त बनाने वाले सारे प्रयासों पर जोर दे रही हैं वैश्वीकरण के इस दौर में महिलाएं भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ हैं। जितना तीव्र गति से महिलाओं का विकास होगा उतनी ही तीव्र गति से देश प्रगति, खुशहाली और समृद्धि के पथ पर आगे बढ़ेगा।

(लेखक राजकीय महाविद्यालय कुशलगढ़ (राजस्थान) में अर्थशास्त्र विभाग में व्याख्याता हैं।)

ग्रामीण विकास और महिला रोजगार

सुदीप कुमावत

देश के ग्रामीण विकास में महिला रोजगार की महत्ता को सर्वोपरि समझते हुए केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा महिला रोजगार के विकास हेतु पिछले कुछ दशकों से अथक प्रयास किये जा रहे हैं। इसमें निश्चय ही ग्रामीण विकास में महिला रोजगार की भागीदारी बढ़ेगी और महिलाओं में आर्थिक आत्मनिर्भरता बढ़ने से समाज में उनकी स्थिति बेहतर होगी।

ग्रामीण विकास का महिला रोजगार से गहरा सम्बन्ध है। महिला रोजगार की प्रक्रिया में ग्रामीण विकास का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है। देश की 72.2 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है इसलिए ग्रामीण विकास भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। भारत की खुशहाली एवं समृद्धि का रास्ता गांव की गलियों में से होकर गुजरता है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी से लेकर इन्दिरा गांधी, राजीव गांधी और अब डॉ. मनमोहन सिंह तक सभी का यह मत है कि भारत की मूल आत्मा गांवों में ही निवास करती है। लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक व सामाजिक स्थिति किसी से छिपी नहीं है क्योंकि ग्रामीण आधारभूत ढांचे और संरचनात्मक ढांचे की स्थिति ठीक नहीं है। इसलिए ग्रामीण विकास पर ध्यान देना आवश्यक है जिससे महिला रोजगार को बढ़ाया जा सके।

देश की ग्रामीण जनसंख्या में लगभग आधा भाग महिलाओं का है, अतः ग्रामीण विकास में महिलाओं की अनदेखी नहीं की जा सकती है। किसी भी देश की सामाजिक, आर्थिक प्रगति को जानने के लिए वहां की महिलाओं की स्थिति एवं स्तर का आंकलन करना अति आवश्यक है। समाज में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। महिलाओं की शक्ति का समुचित उपयोग करने एवं सम्माननीय स्थान देने पर वे राष्ट्र के विकास को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित कर सकती हैं। यह सच है कि ग्रामीण महिलाओं को विकास की मुख्य धारा से जोड़े बिना किसी समाज, राज्य एवं देश के आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती है।

ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर में सुधार धीमी गति से हुआ है, जिसका मुख्य कारण ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का सीमित प्रभाव रहा है। इन कार्यक्रमों का लाभ दूर–दराज के इलाकों तक नही पहुंच पाया है। इसलिए योजना के प्रारूप में स्पष्ट रूप से उल्लिखित किया गया है कि "विभिन्न क्षेत्रों के विकास के लाभ से महिलाओं को वंचित नहीं रखा जाए और सामान्य विकास कार्यक्रमों के साथ–साथ महिलाओं के लिए विशेष कार्यक्रम भी चलाए जाएं। सामान्य विकास कार्यक्रमों में आर्थिक जैंडर संवेदनशीलता परिलक्षित की जानी चाहिये।"

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सर्वप्रथम सन् 1954 में सरकार ने ग्रामीण विकास कार्यक्रम की शुरूआत की, लेकिन महिलाओं की वास्तविक भागीदारी का प्रारम्भ सन् 1974 में हुआ। महिलाओं की व्यवहारिकता एवं निपुणता को प्रदर्शित करने के लिए गरीबी निवारण एवं विकास कार्यक्रमों की आवश्यकता पर बल दिया। ग्रामीण विकास के अन्तर्गत महिला रोजगार के प्रसार से महिलाओं की समाज के सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र में सहभागिता बढ़ी है। भारत में पिछले तीन दशकों से महिलाओं की कार्य सहभागिता का प्रतिशत निरन्तर बढ़ रहा है। जैसा कि सन् 1995 में मानव विकास रिपोर्ट में बताया गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं की कार्य सहभागिता की दर अधिक है। भारतीय श्रम में महिलाओं का योगदान एक तिहाई है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में 90 प्रतिशत व शहरी क्षेत्रों में 10 प्रतिशत महिलाएं असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं।

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसकी 72.2 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। यह जनसंख्या कृषि, कुटीर उद्योग, हथकरघा जैसे कार्यों पर निर्भर करती है। देश के आर्थिक विकास में कृषि का महत्वपूर्ण योगदान है। देश की 58 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्य में लगी हुई है, जिसका सकल घरेलू उत्पाद में 25 प्रतिशत हिस्सा है। कृषि कार्य ग्रामीण जनसंख्या का मुख्य व्यवसाय है। कृषि क्षेत्र में महिला श्रमिकों द्वारा किये जाने वाले अनेक कार्य बुवाई, निराई–गुड़ाई, चारे की कटाई, अनाज निकलवाने आदि तक सीमित है। इसके अतिरिक्त महिलाएं मुर्गीपालन, पशुपालन और मधुमक्खी पालन के कार्य भी करती हैं। इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्र की 83 प्रतिशत महिलाएं कृषि और कृषि से सम्बन्धित कार्यों में लगी हुई हैं।

भारत सरकार ने ग्रामीण विकास में महिला रोजगार की भागीदारी बढ़ाने के लिए समय–समय पर नीतियों का निर्माण किया है। भारत में ग्रामीण विकास, रोजगार–संवर्द्धन व विभिन्न क्षेत्रों की विशेष किस्म की समस्याओं को हल करने के लिए कई प्रकार के कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं, जिनमें से कुछ विशेष कार्यक्रम निम्न प्रकार हैं :–

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना

गांवों में रहने वाले गरीबों के लिए स्वरोजगार की यह योजना 1 अप्रैल, 1999 को प्रारम्भ की गई। इस योजना में पूर्व से चल रही 6 योजनाओं का विलय किया गया है। इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में अत्यधिक मात्रा में सूक्ष्म उद्योगों की स्थापना करना है। इस कार्यक्रम की मुख्य बातें निम्नलिखित हैं :–

- इस योजना के अन्तर्गत अनु.जाति/जनजाति को 50 प्रतिशत, महिलाओं को 40 प्रतिशत, विकलांगों को 3 प्रतिशत सहायता देने का लक्ष्य बनाया गया है।

- स्वयं सहायता समूहों की स्थापना का निर्णय किया गया जिसमें महिलाओं को वरीयता प्रदान की गई है।
- इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 1999–2004 तक 19.69 लाख स्वयं सहायता समूहों का गठन किया जा चुका है, जिसमें 45.67 लाख स्वरोजगारी शामिल हैं। इन्हें अब तक कुल 9385.11 करोड़ रुपये की सहायता दी गई है। इन कुल स्वरोजगारियों में 45.69 प्रतिशत अनुसूचित जाति/जनजाति से और 52.80 प्रतिशत महिलाएं हैं।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी कार्यक्रम

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह और कांग्रेस अध्यक्ष श्रीमती सोनिया गांधी ने 2 फरवरी, 2006 को आंध्र प्रदेश के अनन्तपुर जिले में एक ऐतिहासिक और पथ–प्रदर्शक कानून, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी कार्यक्रम का शुभारम्भ किया।

इस यौजना के अन्तर्गत मजदूरों की संख्या में कम से कम एक तिहाई महिलाओं को आवश्यक रूप से रोजगार प्रदान करने की व्यवस्था की गई है। यह योजना 27 राज्यों के 200 पिछड़े जिलों में लागू की गई है। योजना के क्रियान्वयन हेतु वर्ष 2005–06 में 23 अरब 67 करोड़ 57 लाख रुपये जारी किए गए तथा वर्ष 2006–07 के लिए 440157.07 लाख रुपये की धनराशि जारी की गई। इसके अंतर्गत 2 करोड़ 54 लाख 73 हजार 820 "जॉब कार्ड" जारी किए गए जिससे 89 लाख 43 हजार 703 लोगों ने काम की मांग की और 83 लाख 5930 लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया जा चुका है, जिसमें महिलाओं की एक तिहाई भागीदारी है। अनुसूचित जाति/जनजाति और महिलाओं की भागीदारी इस कार्यक्रम में पर्याप्त रूप में बढ़ी है।

महिला स्वयं सिद्ध योजना

महिला सशक्तिकरण वर्ष 2001 में इस योजना की घोषणा केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री द्वारा 12 जुलाई, 2001 को केन्द्रीय परामर्श समिति की बैठक में की गई। इस योजना को महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों के गठन के माध्यम से संचालित किया जाना है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य महिलाओं का सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण करना है। योजना को चरणबद्ध तरीके से पूरे देश में लागू किया जाएगा। प्रारम्भ में प्रथम चरण में देश के 650 विकास खण्डों में इसे 116 करोड़ रुपये व्यय करते हुए संचालित करने का निर्णय लिया गया है। इस योजना के अन्तर्गत 9.30 लाख महिलाओं को लाभान्वित किया जा सकेगा।

स्वर्णिम योजना

यह योजना सरकार द्वारा पिछड़े वर्ग की ऐसी महिलाओं के लिए चालू की गई है जो गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों की सदस्य हैं। इस योजना के अन्तर्गत पिछड़े वर्ग की महिलाओं को 50 हजार रुपये तक का ऋण उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई है। इस ऋण पर ब्याज की दर मात्र 4 प्रतिशत निर्धारित की गई है। इस ऋण को महिलाएं 12 वर्ष की अवधि में जमा करा सकती हैं।

महिला डेयरी परियोजना

ग्रामीण महिलाओं के जीवन को सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से ऊंचा उठाने हेतु महिला डेयरी परियोजना की शुरूआत की गई है। इस परियोजना के अन्तर्गत देश में महिला दुग्ध सहकारी समितियों का गठन कर उनकी प्रत्यक्ष भागीदारी सुनिश्चित की गई है। आज इन समितियों को पूर्णरूप से महिलाओं द्वारा संचालित किया जा रहा है। इन समितियों के गठन से महिलाओं में आत्मविश्वास एवं नेतृत्व क्षमता के विकास की भावना जागृत हुई है। भारत सरकार के महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा संचालित कार्यक्रम 'समर्थन', प्रशिक्षण एवं रोजगार कार्यक्रम' के अन्तर्गत सन् 2004 में लगभग 9000 महिला दुग्ध समितियों के माध्यम से 3.6 लाख महिला सदस्य लाभान्वित हो रही थीं।

ग्रामीण विकास के अन्तर्गत महिला रोजगार की स्थिति में सुधार लाने हेतु इन कार्यक्रमों के अतिरिक्त भारत सरकार द्वारा महिलाओं के लिए सामान्य विकास कार्यक्रम भी चलाए जा रहे हैं। जो निम्न प्रकार हैं।

सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना

इस योजना का शुभारम्भ 25 सितम्बर, 2001 को किया गया था। यह योजना देश के 385 जिलों में चलाई जा रही है। इस योजना में 19 करोड़ कार्य दिवसों के लिए रोजगार जुटाने में मदद मिली है। योजना के अन्तर्गत 7 लाख कार्य शुरू किए गए, जिनमें से 3 लाख कार्य पूरे किये जा चुके हैं। इस योजना में अनुसूचित जाति/जनजाति के लोगों को 22.5 प्रतिशत सहायता देने का लक्ष्य रखा गया है।

प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना

आर्थिक सुधारों के लाभ समाज के सभी वर्गों तक पहुंचाने के लिए और ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों का जीवन स्तर ऊपर उठाने के लिए सामाजिक तथा आर्थिक आधारभूत ढांचे के निम्न तत्वों की पहचान की गई है जो इस प्रकार है :–

- प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना।
- ग्रामीण आवास (i) इन्दिरा आवास योजना (ii) समग्र आवास योजना।
- ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम।
- ग्रामीण स्वच्छता।
- राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना।

इन क्षेत्रों में किए जा रहे प्रयासों में तेजी लाने के लिए प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना की शुरूआत 2000–01 में की गई।

खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग

इस आयोग की स्थापना सन् 1956 में की गई थी। यह गैर कृषि क्षेत्र में रोजगार के अवसरों का सृजन करता है। इसकी स्थापना निम्न उद्देश्यों के साथ की गई है।

- ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराने का सामाजिक दायित्व।
- ग्रामीण व्यक्तियों को आत्मनिर्भर बनाने एवं एक समृद्ध ग्रामीण सामुदायिक भावना उत्पन्न करने का विस्तृत दायित्व।

खादी एवं ग्रामोद्योग का वर्ष 2001–02 के अनुसार उत्पादन 7551.52 करोड़ रुपये तथा रोजगार स्तर 62.64 लाख व्यक्ति था।

इस प्रकार भारत सरकार द्वारा ग्रामीण विकास में महिला रोजगार को प्रोत्साहन देने हेतु कई कार्यक्रमों का आयोजन किया जा रहा है, जिससे महिला रोजगार की स्थिति सुदृढ़ हो सके।

देश के ग्रामीण विकास में महिला रोजगार की महत्ता को सर्वोपरि समझते हुए केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा महिला रोजगार के विकास हेतु पिछले कुछ दशकों से अथक प्रयास किये जा रहे हैं, जिससे निश्चय ही ग्रामीण विकास में महिला रोजगार की भागीदारी बढ़ेगी और महिलाओं में आर्थिक आत्मनिर्भरता बढ़ने से समाज में उनकी स्थिति बेहतर होगी।

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का मूल्यांकन

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही ग्रामीण विकास की अनेक योजनाओं और कार्यक्रमों का संचालन किया जाता रहा है। प्रारम्भ में इन योजनाओं और कार्यक्रमों की संख्या काफी कम रही, जिनमें धीरे–धीरे वृद्धि की जाती रही है। इन कार्यक्रमों के संचालन से यह आशा की गई थी कि ग्रामीण विकास तीव्र गति से होगा और ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों के जीवन स्तर में सुधार होगा। लेकिन जिस गति से कार्यक्रमों की घोषणा की गई और उनमें बदलाव किया गया उस गति से महिलाओं, गरीबों, पिछड़े वर्गों के लोगों के जीवन स्तर में परिवर्तन नहीं आ सका।

विभिन्न विकास कार्यक्रमों का ग्रामीण क्षेत्रों में अनुकूल प्रभाव नहीं पड़ने के पीछे प्रमुख कारण निम्न हैं : –

- महिलाओं के लिए विशेष कार्यक्रमों का क्रियान्वयन काफी कम मात्रा में और देर से किया गया।
- जिन व्यक्तियों को वास्तव में सुविधाएं मिलनी चाहिए थी उन्हें नहीं मिली।
- अशिक्षा के कारण लोगों को कार्यक्रमों की सही जानकारी उपलब्ध नहीं हो पाई।

इन सभी कमियों के बावजूद ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। वर्तमान में इन कार्यक्रमों के संचालन से देश की तस्वीर बदलती नजर आ रही है, जिसमें विशेषकर महिलाओं, गरीबों, पिछड़े वर्गों की सामाजिक आर्थिक स्थिति में परिवर्तन हुआ है।

निष्कर्ष

भारत में 1974 के बाद महिला रोजगार की स्थिति में काफी सुधार हुआ है एवं महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति भी मजबूत हुई है। परन्तु इसे अभी भी संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है। देश के ग्रामीण क्षेत्रों में महिला रोजगार की स्थिति दयनीय है। अतः आज भी देश में महिला रोजगार की ओर ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है। उपर्युक्त अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सरकार द्वारा महिला रोजगार को प्रोत्साहन देने हेतु काफी कार्यक्रम क्रियान्वित किए गए हैं। इन कार्यक्रमों का महिला रोजगार पर सकारात्मक प्रभाव भी पड़ा है। महिलाएं हमारे देश की जनसंख्या का महत्वपूर्ण भाग होने के कारण देश के आर्थिक विकास को प्रभावित करती हैं। इसलिए ग्रामीण कार्यक्रमों का सुचारू रूप से संचालन किया जाना आवश्यक है। सरकार द्वारा महिलाओं के लिए सामान्य कार्यक्रमों के साथ–साथ विशेष कार्यक्रमों का संचालन भी किया जाना चाहिए, जिससे निश्चय ही महिलाओं की ग्रामीण विकास में भागीदारी बढ़ेगी।

(लेखक राजस्थान विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग में शोधकर्ता हैं।)

मानव तस्करी की शिकार महिलाओं और बच्चों की मुक्ति और पुनर्वास के लिए वृहद योजना

मानव तस्करी की शिकार महिलाओं और बच्चों की मुक्ति और पुनर्वास के लिए सरकार ने आज एक वृहद योजना शुरू की। इस योजना का नाम उज्ज्वला है। इसके अंतर्गत सीमा पार से तस्करी करके लाई गई महिलाओं और बच्चों को मुक्त करवाकर उन्हें वापस उनके देश भेजने की भी व्यवस्था की गई है।

मंत्रालय ने बहुआयामी योजना बनाई है जिसमें महिला तस्करी का मुकाबला करने के लिए कानून बनाना, नीतिगत और कार्यक्रमगत हस्तक्षेप शामिल हैं।

उज्ज्वला योजना में निम्नलिखित पांच प्रमुख बिंदु हैं:–

- रोकथाम – इसके तहत सामुदायिक निगरानी समूहों/कैशौर्य दलों का गठन, पुलिस, सामुदायिक नेताओं जैसे महत्वपूर्ण कर्मियों को इस समस्या के प्रति जागरुक और संवेदनशील बनाना, कार्य शालाओं का आयोजन, आदि।
- बचाव – शोषण वाले स्थान से पीड़ित को बचाकर सुरक्षित निकालना।
- पुनर्वास – इसमें पीड़ित को सुरक्षित आश्रयस्थल मुहैया कराना है। इसमें भोजन, वस्त्र, सांत्वना, चिकित्सकीय सुविधा, कानूनी सहायता, रोजगारपरक शिक्षा और आय के स्रोत वाली गतिविधियां शामिल हैं।
- पुनस्समाकलन – अगर पीड़ित महिला चाहे तो उसे दोबारा उसके परिवार/समुदाय में वापस भेजना।
- पुनर्वापसी – सीमा पार की पीड़ित महिलाओं को उनके मूल देश में वापस भेजना। (पसूका)

Gandhiji
राष्ट्रपिता की स्मृति में
सूचना एवं प्रचार निदेशालय
दिल्ली सरकार
दिल्ली टीम - स्वप्न करे साकार
KH-03/08/4

पशुधनः ग्रामीण गरीबों का अपना एटीएम

संदीप कुमार

आम बोलचाल की भाषा में एटीएम (ऑटोमेटेड टेलर मशीन) ने **एनी टाइम मेनी** का रूप अख्तियार कर लिया है। एटीएम, डेबिट कार्ड, क्रेडिट कार्ड जैसे बहुतेरे विकल्पों ने लोगों की वित्तीय जिंदगी बदलकर रख दी है। लेकिन एक कटु सच यह भी है कि अभी तक एटीएम लाखों गांव–गिराम तक नहीं पहुंच पाया है। इस वजह से एटीएम के सीधे–सीधे प्रयोग से गरीब–गुरबे, ग्रामीण किसान, मजदूर अब भी महरुम हैं। बावजूद इसके आपको जानकर हैरत होगी कि ग्रामीण–गरीबों के पास बहुत पहले से ही एटीएम कार्ड जैसी एक ऐसी समानांतर व्यवस्था है जिससे वो कभी–भी कहीं–भी नगदी निकलवा सकते हैं और एटीएम जैसी यह व्यवस्था है पशुपालन। कह सकते हैं कि गरीबों के पास भले ही एंटीएम कार्ड नहीं है लेकिन एनी टाइम मनी हासिल करने का एक जरिया जरूर है।

नगदी पैसों के लिहाज से पशुपालन की परिपाटी ग्रामीण इलाकों में सदियों से चली आ रही है। कम–से–कम झारखंड के ग्रामीण इलाकों में इसका अब भी धड़ल्ले से प्रयोग देखा जा सकता है। जब हाईटेक होती दुनिया में लोगों ने एटीएम और क्रेडिट कार्ड चमकाना शुरू कर दिया तो इससे गिरिडीह जिले (झारखंड) के बगोदर के एक छोटे से गांव घाघरा के रतिलाल महतो को कोई फर्क नहीं पड़ता। रतिलाल महतो जब चाहे तब बिना किसी एटीएम कार्ड के जहां चाहे वहां पैसे निकलवा–भुनवा सकते हैं। वजह यह है कि उनके पास दर्जन भर बकरे–बकरियां और गाय–बैल हैं। इसके अलावा वो मुर्गी और बत्तख भी पालते हैं। गरीब होने के बावजूद रतिलाल के पास जीव–जंतु के रूप में ऐसा जखीरा है जिसका मार्केट वैल्यू हजारों में है। रतिलाल के पास जीव–जंतुओं का जो जखीरा है उसे अगर हम जिंदा एटीएम कार्ड कहें तो क्या गलत है। रतिलाल ऐसी किस्मत वाले अकेले ग्रामीण नहीं हैं। वो तो एक प्रतीक हैं वैसे अनगिनत गरीब लोगों के जिनके लिए पशुपालन का मतलब एटीएम से कम नहीं है।

परिवारों के पास आधे दर्जन तक मवेशी होते हैं

पशुपालन को ग्रामीणों का एटीएम समझना निहायत ही गलत नहीं होगा। पशुपालन आज भी पारंपरिक तरीके से होने वाली खेती और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में अहम भूमिका निभाता है। झारखंड के ग्रामीण इलाकों में शायद ही कोई परिवार होगा जो पशुपालन न करता हो। पशुपालन का मतलब बड़ी संख्या में जानवरों का जखीरा ही खड़ा कर लेना नहीं है। एक–दो मवेशियां भी लोग पाल लेते हैं। झारखंड के गांवों में कमोबेश ग्रामीण बैल–गाय, भैंस–भैंसा, बकरा–बकरी आदि पालते हैं। इसके अलावा घरेलू पक्षियों में मुर्गा–मुर्गी, बत्तख, कबूतर भी पालने का प्रचलन है। बैल–भैंसा आदि का बड़े पैमाने पर खेती–बाड़ी में इस्तेमाल होता है। ग्रामीण लोग भैंस–गाय को दूध प्राप्ति के लिए और मवेशियों की संतति बढ़ाते रहने के लिए भी पालते हैं। दूध का खुद ही इस्तेमाल करने या फिर उसे बेचने का भी काम किया जाता है। इसी तरह से मुर्गी और बत्तख के अंडों की बिक्री करके भी पैसे कमाए जाते हैं। बैंकिंग के लहजे में कहें तो ये पशुधन दूध और अंडे के रूप में गरीबों को बराबर ब्याज देते रहते हैं। इसे आम के आम और गुठली के दाम के तौर पर भी आप देख सकते हैं।

लंबे समय तक मादा जंतुओं को पालने का फायदा भी गरीबों–किसानों को होता है। बकरियां–भेड़ें तो एक ही बार में दो–तीन मेमने तक जनती हैं। गाय–भैंस की संतति भी साल–दो साल में एकाध बार हो ही जाती है। अगर मुर्गी या फिर बत्तख की बात करें तो इनके अंडे का इस्तेमाल नहीं किया जाए तो इनसे भारी संख्या में जीवों की उत्पत्ति हो जाया करती है और फिर मुर्गियों बत्तखों का एक दड़बा–सा तैयार हो जाता है। अगर एक बार फिर बैंकिंग की तर्ज पर जीव–जंतुओं की संतति को देखा जाए तो इसे हम फिक्सड डिपोजिट कह सकते हैं। यानी एक नियत समय के बाद पशुधन का दुगुना–चौगुना हो जाना। ये तो अब साफ हो गया है कि ग्रामीण इलाकों में पशुपालन और पशुधन एक तरह से चलता–फिरता बैंकिंग–सिस्टम है। लेकिन इन सबसे बढ़कर जो बात पशुपालन के पक्ष में जाती है वो है इसका कभी–भी मुद्रा के रूप में परिवर्तित हो जाना। बैंकिंग और अर्थव्यवस्था

शब्दावली में आप इसे लिक्विडिटी कह सकते हैं। चूंकि पशुधन का करेंसी (रुपये) में तुरत–फुरत परिवर्तन हो सकता है इसलिए कह सकते हैं कि पशुधन में इजी कन्वर्टिबिलिटी का गुण भी होता है। बैंकिंग बोलचाल में कहें तो पशुधन एक ऐसा मूलधन है जिससे बराबर ब्याज भी मिलता रहता है, एक नियत समय पर यह दुगुना–चौगुना भी हो जाता है और जरूरत पड़ने पर कभी भी इसके मार्फत रुपया निकाला (विद्ड्रावल किया) जा सकता है।

अपनी लिक्विडिटी और कन्वर्टिबिलिटी के लक्षण की वजह से ही पशुधन को आज के एटीएम के जमाने की टक्कर की चीज माना जाने लगा है। झारखंड की सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक स्थिति पर एक बार नजर फेरें तो ये साफ हो जाएगा कि कैसे पशुधन यहां के गरीब–गुरबों के लिए एटीएम से कम नहीं है। झारखंड में साढ़े बत्तीस हजार से ज्यादा गांव हैं जहां इस प्रदेश की अधिकांश आबादी रहती–बसती है। आधी से ज्यादा आबादी गरीबी रेखा से नीचे अपना पालन पोषण करती है। झारखंड की कमोबेश सवा दो करोड़ की आबादी में से ज्यादातर खेती–किसानी करते हैं या फिर खेतिहर मजदूर हैं। आंकड़ों की गवाही यही है कि झारखंड की जो अधिकांश आबादी गांवों में रहती है और खेती–किसानी करती है वो बहुत हद तक गरीबों की श्रेणी में ही आती है। जब गरीबी है और खेती ही एकमात्र गुजारा है तो ऐसे में लाजिमी है कि ग्रामीणों के सामने कई दफे रुपये–पैसों की मुश्किलें आती ही होंगी। ऐसी ही हालत में इन गरीब–गुरबों के लिए उनका पशुधन मसीहा का काम करता है।

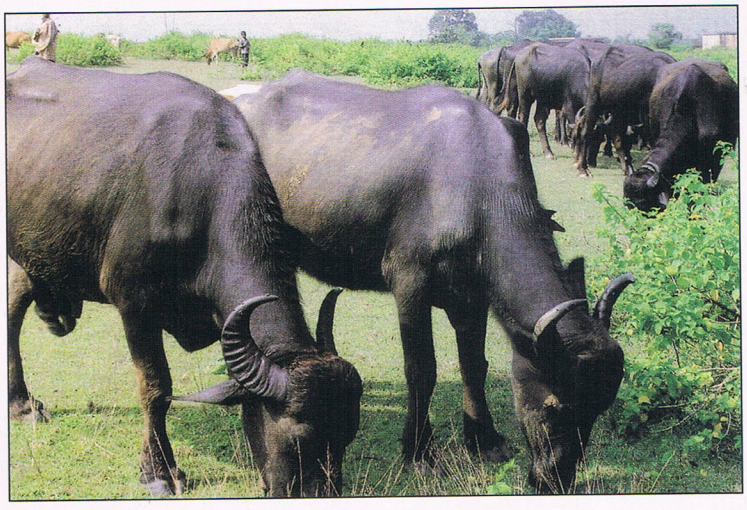

झारखण्ड के गांवों में भैंस–भैंसा भी खूब पाला जाता है

ग्रामीण इलाकों में आज भी परंपराओं और रूढ़ियों पर बेहद जोर होता है। गाहे–बगाहे होने वाले उत्सवों–समारोहों के लिए ग्रामीणों को पैसे की जरूरत पड़ती है। त्योहार तो मानो खर्चा का दूसरा नाम ही होते हैं। होली–दीवाली हो या ईद–बकरीद या फिर करमा–सरहूल, हर पर्व मनाने में अंटी ढीली करनी पड़ती है। लड़कियों की शादी के लिए दहेज जुटाना पहाड़ के समान होता है। यहां तक कि श्राद्ध जैसे कामों में भी अच्छा–खासा खर्च हो जाता है। ये सब ऐसे हालात होते हैं जबकि गरीबों–किसानों के सामने पैसे जुटाने की सबसे ज्यादा दरकार पड़ती है। लेकिन किसानों के पास न तो कोई नौकरी है कि वे भविष्य–निधि (पीएफ) से रुपये निकालकर काम चला लें या फिर बैंक से आसानी से पर्सनल लोन ही हासिल कर सकें और न ही उनके पास कोई कारोबार–धंधा है कि रुपयों का आना–जाना लगा रहे। ऐसी ही विकट और संकट की स्थिति में गरीबों–किसानों को साहूकारों का दामन थामना पड़ता है। कभी अपने खेतों को बेचना पड़ता है तो कभी उसे गिरवी रखकर कर्ज लेना पड़ता है, वो भी काफी ज्यादा ब्याजदर पर। फिर हालत वैसी हो जाती है जिसके लिए एक ग्रामीण अर्थशास्त्रीय कहावत है कि भारतीय किसान कर्ज में जन्म लेते हैं, कर्ज में ही पलते–बढ़ते हैं और फिर कर्ज में ही मर जाते हैं। लेकिन पशुपालन ने बहुत हद तक ग्रामीणों को बेहाल होने से बचाया है।

झारखंड के ग्रामीण इलाकों में देखा गया है कि जब भी छोटी–मोटी तादाद में रुपयों की जरूरत पड़ती है तो वो पशुधन पर भरोसा करते हैं। मसलन जब भी अगर किसी को पांच सौ या हजार रुपये की जरूरत पड़ी तो वो एक–दो बकरे को बेचकर इतनी रकम जुटा सकता है। मोटी रकम के हालात में गाय–बैल या फिर भैंस–भैंसा की भी बिक्री कर दी जाती है। अच्छे नस्ल के इन मवेशियों के लिए पांच से पंद्रह हजार रुपये तक मिल जाया करते हैं। हारी–बीमारी में भी किसानों को पैसों की जरूरत पड़ती रहती है। चूंकि ग्रामीण इलाकों में चिकित्सा के मुकम्मल बंदोबस्त नहीं होते सो कस्बों–शहरों तक उन्हें दौड़ लगानी पड़ती है। ऐसे में कई बार यह भी देखा जाता है कि मरीज और मवेशी दोनों को जरूरतमंद लोग एक ही साथ लेकर बाजार पहुंचते हैं और फिर मवेशी बेचकर मरीजों का इलाज करवाकर लौटते हैं। यह सही है कि कई दफे गरीबों को उनके पशुधन का सही दाम नहीं मिल पाता लेकिन इतना तो जरूर होता है कि वक्त पर उनका पशुधन काम आ जाता है और कुछ–न–कुछ रकम दिला ही देता है। ऐसे में अगर मौके पर मवेशियों के बदले कुछ कम कीमत मिलती भी है तो इस रूप में लें कि हमने किसी दूसरे बैंक के एटीएम से पैसे निकलवाए जिसमें कुछ रकम सर्विस चार्ज के रूप में काट ली गई है।

ऐसा भी नहीं है कि पशुपालन सिर्फ मजबूरी में काम आने के उद्देश्य से ही किया जाता है। पशुपालन तो खेती का प्राण है। खेती और पशुपालन का संबंध तो चोली–दामन वाला होता है। एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती। इसलिए भी बैल–भैंसा जैसे मवेशियों के पालन पर किसानों–ग्रामीणों का खूब जोर होता

है। आज भी झारखंड में खेती अधिकतर पारंपरिक तरीके से होती है। यहां खेती में ट्रैक्टर की भूमिका अभी बेहद कम है। जुताई के काम में बैल–भैंसा ही हल खींचने का काम करते हैं। फसलों की कटाई होने के बाद मवेशियों की मदद से ही बैलगाड़ी–भैंसागाड़ी के मार्फत खेतों से उठाकर फसलों को घरों–खलिहानों तक लाया जाता है। झारखंड के किसान अधिकतर धान की खेती करते हैं। थ्रेसर–ट्रैक्टर हर किसान के बूते की बात नहीं इसीलिए झारखंडी किसान मवेशियों की मदद से ही फसलों से धान निकालते हैं और फिर पुआल–बिचाली अलग करते हैं। इसके लिए बाकायदा एक खलिहान बनाया जाता है जहां धान के पौधों को जमीन पर फैलाने के बाद उन पर मवेशियों के झुंड को बार–बार चलाया जाता है। इससे धान झड़कर अलग हो जाता है और पुआल अलग। मवेशियों की भूमिका यहीं खत्म नहीं होती। धान को घर तक पहुंचाने या उससे चावल निकालने के लिए मिल तक ले जाने और फिर चावल को घर तक बैलगाड़ी में ही लादकर ले जाया जाता है। केवल धान की एक फसल को ही ध्यान में रखते हुए भी अगर एक जोड़े बैल की भूमिका को देखें तो हमें अंदाजा हो जाएगा कि पशुपालन की खेती में क्या अहमियत है। दलहन, तिलहन समेत दूसरी फसलों की खेती के लिहाज से भी मवेशियों की भूमिका कम नहीं।

हालांकि, दूध बेचने का धंधा करने वालों और जानवरों की खरीद–बिक्री का कारोबार करने वालों के लिए तो पशुधन एक व्यवसाय है लेकिन गरीबों–किसानों के लिए पशुपालन एक जरूरत है उनकी खेती के लिए। लगे हाथ अगर ये पशुपालन उन्हें बिना पासबुक और एटीएम कार्ड के बैंकिंग की तमाम सुविधाएं चलते–फिरते दिला देती हैं तो इसे सोने पर सुहागा क्यों न कहें।

(लेखक स्टार न्यूज के पत्रकार हैं।)
ई–मेल : sandepk@starnews.co.in

गेहूं के क्षेत्रफल ने 275 लाख हेक्टेयर की सीमा को पार किया

कृषि मंत्रालय द्वारा संकलित आंकड़ों के अनुसार वर्तमान रबी मौसम में बुआई में अच्छी प्रगति हो रही है। गेहूं की बुआई पिछले वर्ष इसी दिन के 280.63 लाख हेक्टेयर की तुलना में 275.67 लाख हेक्टेयर की गयी है।

19.84 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में शरद चावल की बुआई की गयी है जबकि पिछले वर्ष 20.06 लाख हेक्टेयर में बुआई की गयी थी।

पिछले वर्ष 2007 में इस समय तक की गयी 69.4 लाख हेक्टेयर में मोटे अनाज की बुआई की तुलना में इस वर्ष 67.77 लाख हैक्टेयर में बुआई की गयी है। जौ एवं मक्के की पिछले वर्ष की तुलना में ज्यादा क्षेत्र में खेती की गयी है (जौ–7.57 लाख हैक्टेयर, मक्का–10.35 लाख हैक्टेयर)।

रबी तिलहन की पिछले रबी में 96.65 लाख हैक्टेयर में की गयी बुआई की तुलना में इस वर्ष 87.97 लाख हैक्टेयर में बुआई हुई है। सरसों/तोरी बीज का दायरा 59.04 लाख हैक्टेयर तक पहुंच गया है (पिछले रबी में, इस समय तक 66.67 लाख हैक्टेयर)।

रबी दाल की क्षेत्र 131.55 लाख हैक्टेयर (पिछले वर्ष 138.11 लाख हैक्टेयर) चना का क्षेत्र 79.95 लाख हैक्टेयर पहुंच गया है। (पिछले वर्ष इस समय तक 83.24 लाख हैक्टेयर की तुलना में)। (पसूका)

सदस्यता कूपन

मैं/हम **कुरुक्षेत्र** का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का
(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर *निदेशक, प्रकाशन विभाग* को नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....

पता .....

..... पिन .....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली–110 066

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में कृषि

गिरीश चन्द्र पांडे

हाल ही में प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में राष्ट्रीय विकास परिषद की 54वीं बैठक में 11वीं पंचवर्षीय योजना (2007–12) के प्रारूप को स्वीकृति प्रदान की गयी। गौरतलब है कि 27 राष्ट्रीय लक्ष्यों के इस प्रारूप में सकल घरेलू उत्पाद की 10 प्रतिशत विकास दर और कृषि की 2 प्रतिशत की मौजूदा विकास दर को बढ़ाकर 4 प्रतिशत निर्धारित करते हुए कुल 36 लाख करोड़ रुपए के निवेश प्रस्तावों के साथ बजटीय सहायता की राशि 14 लाख करोड़ रुपए निर्धारित की गयी है जो 10वीं योजना से दुगनी है। योजना में केन्द्र और राज्यों के कुल आयोजना व्यय में पर्याप्त बढ़ोतरी कर इसे सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का 13.5 प्रतिशत रखा गया है, जबकि 10वीं योजना में यह 9.4 प्रतिशत था। साथ ही आगामी पांच वर्षों में ढांचागत क्षेत्र में निवेश को मौजूदा जीडीपी के 5 प्रतिशत से बढ़ाकर 9 प्रतिशत करने का लक्ष्य रखा गया है।

योजना में शिक्षित बेरोजगारों हेतु 7 करोड़ नए रोजगार सृजन करते हुए बेरोजगारी में 5 प्रतिशत तक कमी लाने, मातृ और शिशु मृत्यु दर में कमी, बालक–बालिका के बीच के लैंगिक अनुपात को कम करना और शिक्षा, स्वास्थ्य के साथ ही अल्पसंख्यकों के विकास के लिए 15 सूत्रीय कार्यक्रम बनाने पर भी जोर दिया गया है।

11वीं पंचवर्षीय योजना में गेहूं का उत्पादन बढ़ाने के लिए अतिरिक्त सहायता का प्रावधान

इस योजना में एक महत्वपूर्ण पहल खेती से जुड़ी महिलाओं की स्थिति की बेहतरी हेतु कई प्रावधान करना भी है। मसलन, भूमि सुधार अभियान प्रारम्भ करते हुए महिलाओं को जमीन देने की पहल करना और उन्हें स्वतंत्र रूप से मालिकाना हक प्रदान करने की व्यवस्था करना है। सरकारी जमीन का यह आबंटन किसी एक महिला या स्व–सहायता समूहों को भी देने की व्यवस्था है। इसके अलावा गरीब बेसहारा महिलाओं को जमीन खरीदने या पट्टे पर देने हेतु कर्ज रूप में मदद देने का भी प्रस्ताव है। इसमें दो राय नहीं कि गांवों में आज भी महिलाओं की उल्लेखनीय भूमिका होने के बावजूद उन्हें "फार्म वुमेन" की संज्ञा दी गयी है और उनकी आर्थिक तथा शारीरिक स्थिति ठीक नहीं है। उम्मीद करें कि इस पहल से उनकी स्थिति में सुधार होगा। योजना में विभिन्न क्षेत्रों और राज्यों की विषमताएं दूर करते हुए कृषि क्षेत्र पर विशेष ध्यान दिया गया है।

इसमें दो राय नहीं कि पिछले एक दशक से कृषि की नकारात्मक वृद्धि सरकार के लिए चिन्ता का विषय रही है और इसलिए पिछले 4–5 वर्षों में कृषि के विकास हेतु अनेक कार्यक्रम तैयार किए गये हैं। हाल ही में घोषित राष्ट्रीय किसान नीति के साथ ही मध्यावधि समीक्षा (2007–08) में उद्योग तथा ढांचागत क्षेत्र, मुद्रास्फीति, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार तथा पूंजी प्रवाह, विदेशी ऋण, मुद्रा और बैंकिंग, पूंजी बाजार तथा सामाजिक क्षेत्र के साथ कृषि के विकास के लिए अनेक उपाय/सुझाव दिए गए हैं। राष्ट्रीय किसान नीति का मुख्य उद्देश्य किसानों की आय बढ़ाकर खेती को आर्थिक दृष्टि से और लाभकर बनाना है। साथ ही इस नीति में उपयुक्त मूल्य नीति और जोखिम प्रबन्धन, उत्पादकता, जमीन, पानी तथा सहायक सेवाओं में बढ़ोतरी करने पर भी जोर है।

यह नीति राष्ट्रीय किसान आयोग के अध्यक्ष कृषि वैज्ञानिक डॉ. एम.एम. स्वामीनाथन द्वारा केन्द्र सरकार को प्रस्तुत रिपोर्टों के परिप्रेक्ष्य में तैयार की गयी है। डा. स्वामीनाथन की रिपोर्ट में अन्य बातों के साथ–साथ कृषि को एक बेहतर आय का साधन बनाना और इस हेतु कृषक परिवारों द्वारा उत्पादित उपज के बजाय उसकी निवल आय से मापना, न्यूनतम समर्थन मूल्य के बजाय बाजार की मौजूदा कीमतों पर अनाज खरीद की सिफारिश करना और कृषि ब्याज दर को घटाकर 4 प्रतिशत करना शामिल है। इसी प्रकार मध्यावधि समीक्षा में किसानों की आय में सुधार लाने हेतु चार महत्वपूर्ण कारकों अर्थात् भूमि की उत्पादकता, बाजार कनेक्टिविटी, जोखिम प्रबन्धन और कृषि भिन्न फसलों तथा सम्बन्धित गतिविधियों सहित मूल्यवर्धन का उल्लेख किया गया है।

सिंचाई की सुविधा बढ़ाकर और बंजर भूमि में सुधार लाकर शस्यगत क्षेत्र को बढ़ाना, प्रौद्योगिकी तथा प्रबन्ध गतिविधियों का

सृजन तथा अन्तरण, उत्पादन स्तर में सुधार हेतु प्रशिक्षण तथा विजिट सिस्टम को तेज करना शामिल है जबकि दूसरे कारकों में उर्वरक, प्रमाणित बीजों, संस्थानिक ऋणों की व्यवस्था के साथ ही उपभोक्ताओं तथा बाजारों से सम्पर्क बढ़ाने, कृषि प्रसंस्करण, विपणन, भंडारण और आपूर्ति व्यवस्था को चुस्त–दुरुस्त करने पर जोर दिया है। जोखिम प्रबन्धन के तीसरे महत्वपूर्ण कारक के अन्तर्गत वर्षा का अनिश्चित मिजाज, घरेलू तथा वैश्विक मूल्य में उतार–चढ़ाव का सामना करने के लिए समर्थन मूल्य, कृषि बीमा जैसे परम्परागत साधनों के सुदृढ़ीकरण पर ध्यान दिया गया है। मूल्यवर्धन के अन्तर्गत पशुपालन, बागवानी तथा अन्य सम्बद्ध गतिविधियों का विकास कर किसानों को दीर्घकालिक स्तर पर लाभ प्रदान करना शामिल है। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (2007–08) तथा राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के अन्तर्गत कृषि को पुनर्जीवित करने तथा उसकी गिरावट की प्रवृत्ति पर रोक लगाने का प्रयास किया गया है।

समीक्षा में इस बात को स्पष्ट तौर पर इंगित किया गया है कि यदि हम कृषि क्षेत्र की विकास दर 4 प्रतिशत प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें इस पर निरन्तर फोकस करना होगा। इसके अलावा, कृषि क्षेत्र में कतिपय संरचनात्मक परिवर्तनों की ओर भी ध्यान खींचा गया है जिनमें सबसे महत्वपूर्ण बढ़ते शहरीकरण की वजह से कृषि कामगारों का कृषि भिन्न गतिविधियों में तेजी से उन्मुख होना है। इसके अतिरिक्त अपेक्षाकृत कम खाद्यान्न उत्पादक राज्यों से कृषि कामगारों तथा सीमान्त किसानों का पंजाब, हरियाणा, पश्चिम उत्तर प्रदेश तथा आन्ध्र प्रदेश जैसे समृद्ध राज्यों का विस्थापित होना है। निश्चित तौर पर इससे बिहार, उड़ीसा जैसे बीमारु राज्यों की कृषि प्रभावित हुई है और साथ ही क्षेत्रीय असंतुलन को बढ़ावा मिला है। वर्ष 2000–01 में औसतन प्रचालनात्मक जोत का घटकर 1.32 हेक्टेयर होने का उल्लेख है और मौजूदा 120 मिलियन प्रचालनात्मक जोतों का लगभग 18 प्रतिशत भाग 2 हेक्टेयर से ऊपर है।

समीक्षा में स्पष्ट रूप से कृषि की मंदी के कारणों को भी रेखांकित किया गया है जिनमें मृदा पोषण तत्वों तथा जैव तत्वों का अत्यधिक दोहन, वर्षा कमी और अपर्याप्त जल प्रबन्धन, उर्वरकों का संतुलित तथा इष्टतम उपयोग न करना, एक ही जेनेटिक मेटिरियल की लगातार खेती, प्रमाणित बीजों की अनुपलब्धता, मिलावटी बीजों की बिक्री रोकने हेतु कानून प्रवर्तन मशीनरी का अभाव, जोत का घटता आकार, विपणन–सम्बन्धी फसल पर प्रबन्धन ढांचागत सुविधाओं की अपर्याप्तता शामिल है। योजना आयोग की बैठक में प्रधानमंत्री का यह भी कहना था कि वित्त मंत्रालय किसानों के कर्ज की समस्या के समाधान हेतु कार्यक्रम तैयार करने के लिए कृषि मंत्रालय के साथ विचार–विमर्श कर रहा है जिसका ब्यौरा शीघ्र ही घोषित कर दिया जाएगा। कृषि में सिंचाई की समस्या के समाधान के बारे में योजना आयोग में एक कार्यबल भी गठित किया गया है जो सिंचाई सुविधाओं के विस्तार हेतु संसाधनों की आवश्यकता पर गौर करेगा। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि देश की 60 प्रतिशत खेती वर्षा पोषित है। प्रधानमंत्री ने कुछ समय पहले गठित राष्ट्रीय वर्षा सिंचित क्षेत्र प्राधिकरण का उल्लेख करते हुए वर्षा जल संचयन की आवश्यकता पर भी जोर दिया ताकि उसका वर्षा पोषित क्षेत्र में उपयोग हो सके। यह वास्तव में विडम्बना है कि लगभग 79 हजार करोड़ रुपए खर्च करने के बावजूद धरती प्यासी है और 7 मिलियन हेक्टेयर भूमि ही कवर हो सकती है।

इसके अलावा जलवायु परिवर्तन से भी कृषि उत्पादन प्रभावित हुआ है और सूखा, बाढ़ तथा समुद्र का जल स्तर बढ़ने जैसी चुनौतियां सामने आयी हैं। फलस्वरूप, गेहूं, चावल और दाल की पैदावार प्रभावित हुई है। प्रधानमंत्री ने बैठक में जिस खाद्य संकट की बात की है उसके मूल में उनकी यही चिन्ता निहित है। इसलिए कृषि तथा सहकारिता विभाग ने वर्ष 2007–08 में चावल, गेहूं तथा दाल का क्रमशः 10 मिलियन, 8 मिलियन और 2 मिलियन टन उत्पादन बढ़ाने के लिए राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन की शुरूआत की है। राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा 11वीं योजना के दौरान विशेष अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता से प्रायोजित राष्ट्रीय कृषि विकास योजना को प्रारम्भ किया गया है जिसके तहत आगामी चार वर्षों में कृषि क्षेत्रों में सार्वजनिक निवेश के जरिए 25000 करोड़ रुपए खर्च करने की व्यवस्था है। इसके साथ ही सरकार ने वर्ष 2004–05 से तीन वर्ष की अवधि यानी 2007–08 तक कृषि तथा सम्बद्ध गतिविधियों के लिए ऋण प्रवाह को दुगुना कर दिया है और 31 अगस्त 2007 की स्थिति के अनुसार 2,37,880 करोड़ रुपए की स्वीकृत राशि से वाणिज्यिक बैंकों, सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा कुल लगभग 6.79 करोड़ रुपए के किसान क्रेडिट कार्ड जारी किए जा चुके हैं। उन्होंने जीडीपी में कृषि के घटते योगदान जो वर्तमान में लगभग 20 प्रतिशत है, पर भी चिंता व्यक्त की और उसमें निवेश तथा सस्ते ब्याज ऋण मुहैया कराने की वकालत की। सब्सिडी का लाभ जरूरतमंद तथा गरीब लोगों तक न पहुंचने पर निराशा व्यक्त करते हुए उसे विवेक सम्मत बनाने पर जोर दिया।

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि जब तक सब्सिडी बिल में पर्याप्त कटौती नहीं की जाती तब तक केन्द्र तथा राज्य सरकारों की राजकोषीय स्थिति की पुनर्बहाली सम्भव नहीं है। लेकिन यह भी वास्तविकता है कि सभी प्रकार की सब्सिडियों पर एक समान नजरिया नहीं रखा जा सकता। गांवों के गरीब परिवारों के लिए लक्षित राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम को ही

लें, इसके लक्ष्य एवम् उद्देश्यों के प्रति किसी को सन्देह नहीं। इसलिए इस कार्यक्रम में व्याप्त भ्रष्टाचार की वजह से इसको बंद नहीं किया जा सकता बल्कि हमें भ्रष्टाचार का उन्मूलन कर इस योजना को आगे बढ़ाना होगा। प्रधानमंत्री ने स्वीकार किया कि समावेशी विकास की अवधारणा तभी मूर्त रूप ग्रहण कर सकती है जबकि उद्योग और सेवा क्षेत्र के साथ–साथ कृषि भी उसी रफ्तार में आगे बढ़े। उन्होंने कृषि पर जनसंख्या के बढ़ते दबाव को कम करने के लिए औद्योगीकरण की आवश्यकता भी जताई तथा उसे एक राष्ट्रीय आवश्यकता बताया। उनका स्पष्ट मत है कि कृषि पर आश्रित दो तिहाई आबादी की खेती के अलावा अन्य क्षेत्रों में रोजगार दिलाना आज समय की मांग है। उनका मत है कि कृषि के बजाय हजारों युवाओं को उद्योगों में रोजगार दिलाकर हम बेरोजगारी के साथ ही कृषि के संतुलित विकास में सहभागी बन सकते हैं। उनका स्पष्ट मत है कि कृषि क्षेत्र में निश्चित तौर पर यदि किसानों को बदहाली से बचाना है तो अगले पांच वर्षों में लगभग 1 करोड़ लोगों को कृषि से निकालकर दूसरे काम धन्धों में नियोजित करना होगा।

यह तथ्य है कि बढ़ती आबादी का भरण–पोषण मात्र कृषि से सम्भव नहीं है और इसीलिए आज कृषि किसानों के लिए घाटे का सौदा हो गयी है। लेकिन यहां हम इस वास्तविकता से मुंह नहीं मोड़ सकते कि गांवों में उचित ढांचागत सुविधाओं के अभाव की वजह से और भौगोलिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए बड़े उद्योगों की स्थापना में पर्याप्त दिक्कतें हैं, इसलिए स्थानीय आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में कुटीर तथा ग्रामीण उद्योगों को पुनर्जीवित करना आज समय की मांग है। गांवों में खादी तथा ग्रामोद्योग की विशेष भूमिका है, इसलिए उसे भी पुनर्जीवित करने की जरूरत है। ग्रामीण उत्पादों के निर्माण, विपणन तथा उनके वितरण में स्व–सहायता समूहों की भी हम अनदेखी नहीं कर सकते। इसलिए ऐसे समूहों के विकास हेतु हमें दोतरफा प्रयास करना चाहिए। पहला इन समूहों के विकास के लिए बैंकों तथा सहकारी सोसाइटियों द्वारा इन्हें उदार शर्तों पर ऋण मुहैया कराया जाए और दूसरा, महिलाओं को विशेष रूप से ऐसे समूहों के निर्माण में प्राथमिकता दी जाए ताकि उनका सशक्तिकरण भी हो।

योजना का उद्देश्य कृषि को बेहतर आय का साधन बनाना है

कृषि पर चूंकि सेज की मार भी पड़ी है और किसानों को औने–पौने दामों में अपनी उर्वर जमीन से हाथ धोना पड़ा है। किसानों के भारी विरोध के बावजूद सरकार ने भविष्य में केवल प्राइम कृषि भूमि यानि दो फसल देने वाली जमीन के अधिग्रहण के बजाय अब बंजर भूमि को अधिग्रहित करने का निर्णय लिया है और सेज के लिए उदार राहत तथा पुनर्वास नीति बनाने पर भी योजना में जोर दिया गया है। हम इस तथ्य को भी नजरंदाज नहीं कर सकते कि किसानों को उत्पाद के सही दाम उपलब्ध कराने और ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने में निगमित क्षेत्र की भी महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। इसलिए उन्हें गरीबी दूर करने हेतु ग्रामीण परियोजना में उदारता से निवेश करना चाहिए। सरकार का भी यह प्रयास होना चाहिए कि वे कृषि को उद्योग क्षेत्र के बैरक्स विकसित करे ताकि सार्वजनिक तथा निजी भागीदारी सम्भव हो सके। इसके अलावा, राज्यों में स्थित कृषि अनुसंधान केन्द्रों में कार्यरत वैज्ञानिकों को प्रयोगशालाओं से बाहर निकलकर गांवों में खेतों में जाकर मृदा किस्मों और स्थानीय भौगोलिक परिस्थितियों का अध्ययन कर उसके अनुरूप बीजों का विकास करना चाहिए।

11वीं योजना में विशेष रूप से पर्वतीय राज्यों और पर्वतीय इलाकों हेतु एक समान विकास सुनिश्चित करने के लिए एक कार्यबल का गठन करना निश्चित तौर पर उल्लेखनीय पहल कही जा सकती है। निःसन्देह रेगिस्तानी, मैदानी और पहाड़ी इलाकों की भौगोलिक, आर्थिक तथा संसाधनिक संरचना की दृष्टि से विकास की मूल आवश्यकताएं तथा प्राथमिकताएं भी भिन्न–भिन्न हैं। इसलिए इस पहल से गांव तथा शहर के बीच की खाई को पाटने में मदद मिलेगी, गांवों से शहरों की ओर तेजी से हो रहा पलायन रुकेगा, गांव फिर आबाद होंगे। परन्तु यहां यह भी उल्लेखनीय है कि पर्वतीय इलाकों में खेती आजीविका का एकमात्र जरिया होने के बावजूद उससे साल भर का अनाज ग्रामीणों को नहीं मिलता। इसका कारण जहां खेतों का छोटा आकार है वहीं जलवायु परिवर्तन की वजह से भी उनकी कृषि अतिवृष्टि और अनावृष्टि की शिकार रही हैं। उनके लिए

सब्सिडी तथा न्यूनतम समर्थन मूल्य कोई मायने नहीं रखते क्योंकि उनके पास इतना अनाज नहीं होता कि वे उसे मंडी में जाकर बेचें और मोलभाव करें।

इसी प्रकार रासायनिक खाद, बीज खरीदने के लिए भी उनके पास पैसे नहीं है, वे परम्परागत तौर पर जैविक खाद और कम्पोस्ट खाद का उपयोग करते हैं। इसलिए खेती के साथ यदि पशुधन के रखरखाव पर सरकार समुचित ध्यान दे, उनके लिए पौष्टिक चारे की व्यवस्था करे और उनके स्वास्थ्य पर ध्यान दे तो इससे दोतरफा फायदा होगा। पहला, गांवों में दुग्ध क्रांति आएगी और ग्रामीण कुपोषण जो कि देश के लिए एक गम्भीर चुनौती है, उससे निजात मिलेगी और दूसरा साथ ही फसल हेतु खाद आदि की आवश्यकता की भी पूर्ति होगी। इसके अलावा बागवानी मिशन के अन्तर्गत फल, सब्जी, मसाले, फूल, कुक्कुटपालन, मछली पालन पर जोर देना भी आवश्यक है। खाद्य प्रसंस्करण, भंडारण विपणन, ग्रामीण ज्ञान केन्द्रों की स्थापना और आर्गनिक कृषि पर भी ध्यान देने की जरूरत है।

यह भी वास्तविकता है कि गांवों में आज भी किसानों को बीज खाद और कृषि उपस्करों की खरीद हेतु साहूकार पर निर्भर रहना पड़ता है। यह अलग बात है कि बैंकों की शाखाओं का ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तार जारी है और सरकार बराबर बैंकों को किसानों को ऋण मुहैया कराने में कोताही न बरतने के निर्देश भी देती रही है। परन्तु जमीनी हकीकत कुछ और है। साहूकार/ठेकेदार पर किसानों की निर्भरता की वजह से वह अपना कर्ज चुकाने के लिए अपनी उत्पादित फसल को सस्ते दामों में उसे बेचने को विवश है। इसलिए बैंकों से किसान को सस्ती तथा उदार शर्तों पर ऋण उपलब्ध हो, सूखे तथा बाढ़ की स्थिति में उनके कर्ज माफ हों और उनकी फसल का बीमा सुनिश्चित हो। इन सबके लिए ग्राम पंचायत की उल्लेखनीय भूमिका हो सकती है। इसलिए ग्राम पंचायतों का सशक्तिकरण किया जाए। साथ ही ग्रामीणों के सर्वांगीण विकास हेतु उनकी शिक्षा, स्वास्थ्य और पर्यावरण पर भी ध्यान देना होगा। राज्यों का यह भी दायित्व है कि वे केन्द्र सरकार की पठारी इलाकों में गहरे खड्डों और कुओं के जरिए जल एकत्रीकरण कर भूजल स्तर बढ़ाने की कृत्रिम तरीके की योजना पर अमल करें। इससे उन्हें खेती के लिए सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होगी।

इस प्रकार कृषि मौजूदा दौर में अनेक संकटों का सामना कर रही है और उसके समक्ष बहुआयामी चुनौतियां हैं। डेढ़ दशक पहले के आर्थिक सुधारों से भारतीय खेतीबाड़ी और किसानों की जिन्दगी बदतर हुई है यहां तक तक कि उन्हें आत्महत्या करने को भी विवश होना पड़ा है। यही नहीं, तीन दशक के अंतराल के बाद भारत को विदेशों से खाद्यान्न का भी आयात करना पड़ा है। लेकिन 11वीं पंचवर्षीय योजना में कृषि के विकास की जो तस्वीर खींची गयी है उससे एक उम्मीद बंधती जरूर है बशर्ते राज्य केन्द्र के साथ पूर्ण सहयोग करें। हम इस तथ्य को नजर अंदाज नहीं कर सकते कि कृषि राज्यों का विषय है और इस सम्बन्ध में केन्द्र की भूमिका उत्प्रेरक की है। इसलिए प्रत्येक राज्य अपनी स्थानीय जलवायु की दशा, मौसम, सिंचाई व्यवस्था और मिट्टी की किस्मों के अनुरूप कृषि नीतियां तैयार करे और बराबर योजना आयोग तथा केन्द्रीय कृषि मंत्रालय के सम्पर्क में रहे। उन्हें लम्बी अवधि के बजाय लघु तथा मध्यावधि योजनाओं को प्रोत्साहन देना चाहिए। कहना न होगा कि देश में गरीबी, बेरोजगारी व क्षेत्रीय असमानता परस्पर अन्तर्सम्बन्धित हैं, इनसे छुटकारा तभी मिल सकता है जब भारत की अर्थव्यवस्था का मेरुदंड कही जाने वाली कृषि के विकास हेतु केन्द्र तथा राज्य सरकारें अपनी कमर न कस लें। हमें इस वास्तविकता को भी ध्यान में रखना होगा कि किसी देश की प्रगति का मापदंड विकास दर नहीं बल्कि आम आदमी का खुशहाल जीवन होता है और वह तभी सम्भव है जबकि कृषि खुशहाल हो।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)
ई–मेल :–girishchpande@yahoo.com

बिजली उत्पादन लक्ष्य

ग्यारहवीं योजना अवधि के दौरान अतिरिक्त 78,577 मेगावॉट बिजली उत्पादन क्षमता पर जोर दिया गया है। यह क्षमता हासिल करने के लिए जल विद्युत क्षेत्र में कुल 16553 मेगावाट की 53 बिजली परियोजनाओं, ताप ऊर्जा के क्षेत्र में 58644 मेगावॉट की 95 बिजली परियोजनाओं और परमाणु क्षेत्र में 3380 मेगावाट की 4 विद्युत परियोजनाओं की पहचान की गयी है।

राष्ट्रीय बिजली योजना के अनुसार प्रस्तावित क्षमता के जुड़ने से 11वीं योजना के अंत में 550 मीटर कोयले, 33 मी.ट. लिग्नाइट और 89 एमएमएससीएमडी गैस/एलएनजी की जरूरत होगी। इसके अतिरिक्त 11वीं योजना अवधि के दौरान करीब 3.61 लाख श्रमशक्ति की जरूरत होगी जिसमें से करीब 2.76 लाख तकनीकी और करीब 85000 गैर तकनीकी श्रम शक्ति होगी। (पसूका)

सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड–उपयोगिता व प्रगति

प्रो. संदीपसिंह मुंडे एवं डॉ. रजनी वशिष्ठ

किसानों को महाजनों व साहूकारों के शोषण से मुक्त कराने व कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए संस्थागत साख की आवश्यकता है। इसी संस्थागत साख के अंतर्गत सहकारी संस्थाओं द्वारा कृषकों को अल्पकालीन, मध्यकालीन व दीर्घकालीन अवधि के सहकारी ऋण उपलब्ध करवाये जाते हैं।

'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस योजना का लाभ कृषक ही उठाते हैं और कृषक को नगदी साख के साथ खाद, बीज व कीटनाशक आदि समिति के माध्यम से उपलब्ध होते हैं। काश्तकार नगदी साख का प्रयोग कृषि कार्यों में न करके कई बार अन्य घरेलू कार्यों में खर्च कर लेता है परन्तु समिति से उपलब्ध खाद, बीज व कीटनाशक का प्रयोग तो उसे कृषि कार्यों पर करना पड़ता है क्योंकि बैंक द्वारा स्वीकृत साख में 70 प्रतिशत नगद व 30 प्रतिशत साख का खाद, बीज व कीटनाशक उपलब्ध करवाया जाता है, जिससे काश्तकारों को अच्छी खाद, बीज व कीटनाशक उपलब्ध होने से निश्चित रूप से कृषि उत्पादन बढ़ता है।

सहकारिता आंदोलन परस्पर सहयोग के आधार पर आर्थिक विकास व ग्रामीण विकास का मुख्य आधार माना जाता है। सहकारिता का मुख्य उद्देश्य शोषणविहीन समाज की स्थापना करना है। राजस्थान राज्य की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्य करके अपना जीवनयापन करती है और कृषि प्रमुखतः प्रकृति पर निर्भर है। इसलिए कई बार फसल का उत्पादन नहीं हो पाता जिससे किसान को आगामी फसल का उत्पादन करने हेतु ऋण लेना पड़ता है। यह ऋण किसान सदियों से महाजनों व साहूकारों से लेता आया है। ये साहूकार व महाजन ऋण पर मनमर्जी से ब्याज लगाकर किसानों का शोषण करते रहे हैं, जिससे किसान लगातार ऋण के बोझ से दबता आया है। अतः किसानों को महाजनों व साहूकारों के शोषण से मुक्त कराने व कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए संस्थागत साख की आवश्यकता है। इसी संस्थागत साख के अन्तर्गत सहकारी संस्थाओं द्वारा कृषकों को अल्पकालीन, मध्यकालीन व दीर्घकालीन अवधि के ऋण उपलब्ध करवाये जाते हैं। राजस्थान राज्य में सहकारी ऋण वितरण की त्रिस्तरीय व्यवस्था कार्यरत है। राज्य स्तर पर राजस्थान राज्य सहकारी बैंक लि., जिला स्तर पर केन्द्रीय सहकारी बैंक व गांव स्तर पर ग्राम सेवा सहकारी समितियां कार्यरत हैं। केन्द्रीय सहकारी बैंक अपनी शाखाओं के माध्यम से ग्राम सेवा सहकारी समितियों के सदस्यों को सहकारी साख सुविधाएं उपलब्ध करवा रहे हैं। कृषक उपलब्ध ऋण का प्रयोग खाद, बीज, कीटनाशक, श्रमिकों की मजदूरी आदि के भुगतान करने के लिए करते हैं। कृषक द्वारा इस प्रकार के ऋणों का भुगतान फसल काटने के बाद किया जाता है।

राज्य में भारत व पाकिस्तान की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा से लगे श्रीगंगानगर जिले के लोगों के जीवनयापन का मुख्य साधन कृषि है। यहां काश्तकारों को कृषि उत्पादन करने हेतु अल्पकालीन व मध्यकालीन सहकारी साख 'दी गंगानगर केन्द्रीय सहकारी बैंक लि.' द्वारा उपलब्ध करवाई जा रही है। इस बैंक द्वारा अल्पकालीन सहकारी साख 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' के माध्यम से दी जा रही है। यह व्यवस्था इस बैंक द्वारा 1 अप्रैल 1999 से शुरू की गई थी। इस 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' में ऋणी सदस्य का नाम और अन्य विवरण सहित फसलवार स्वीकृत साख सीमा का उल्लेख किया जाता है। बैंक द्वारा सदस्य को 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' के साथ पासबुक व चैक बुक दी जाती है ताकि किसान स्वीकृत साख सीमा तक नगदी व समिति के माध्यम से खाद, बीज व कीटनाशक प्राप्त कर सके। बैंक के मुख्य कार्यालय से प्राप्त जानकारी के अनुसार कृषक को सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम 110 रुपये जमा करवाकर सम्बन्धित ग्राम सेवा सहकारी समिति का सदस्य बनना होगा। उसके पश्चात उस सदस्य को अपनी कृषि भूमि के विवरण समेत एक प्रार्थना पत्र समिति व्यवस्थापक को सौंपना होगा। बैंक की सम्बन्धित शाखा उस कृषक सदस्य की साख सीमा सम्बन्धित सुपरवाइजर से निर्धारित करवाएगा और आवश्यक कार्यवाही के बाद बैंक की सम्बन्धित शाखा सदस्य को 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' के साथ एक चैक बुक व पासबुक जारी करेगा जिससे काश्तकार अपनी निर्धारित साख सीमा तक ऋण प्राप्त करता रहेगा।

'दी गंगानगर केन्द्रीय सहकारी बैंक लि. द्वारा काश्तकार की साख सीमा कृषि भूमि की मात्रा व उससे उत्पन्न की जाने वाली फसल के आधार पर स्वीकृत की जाती है। इस 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' से स्वीकृत साख सीमा में काश्तकार को 70 प्रतिशत नगद साख व शेष साख का समिति के माध्यम से खाद, बीज व कीटनाशक उपलब्ध करवाया जाता है। एक काश्तकार को क्षेत्र में

अधिकतम 60,000 रुपये व असिंचित क्षेत्र में अधिकतम 50,000 रुपये तक का ऋण उपलब्ध करवाया जाता है। सहकारी किसान क्रेडिटधारी किसान स्वीकृत साख सीमा तक बैंक की सम्बन्धित शाखा में चैक प्रस्तुत कर जरूरत के अनुसार ऋण प्राप्त कर सकते हैं और प्राप्त ऋण का उपयोग कृषि उत्पादन कार्यों में कर सकते हैं। काश्तकार को धन उपलब्ध होने पर वह अपने बैंक खाते में जमा करवा सकता है। काश्तकार द्वारा निर्धारित साख सीमा तक आवश्यकतानुसार समिति के माध्यम से खाद, बीज व कीटनाशक प्राप्त किया जाता है। सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड की सबसे बड़ी विशेषता यह भी है कि समिति कार्यालय में खाद,बीज व कीटनाशक न उपलब्ध होने की दशा में काश्तकार सम्बन्धित क्रय–विक्रय सहकारी समिति से खाद, बीज व कीटनाशक आदि उचित मूल्य पर प्राप्त कर सकते हैं। 7 बीघा या इससे अधिक सिंचित कृषि भूमि वाला 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' धारी काश्तकार बैंक की कृषक मित्र योजना के तहत अधिकतम 2,50,000 रुपये तक का ऋण प्राप्त कर सकता है।

'दी गंगानगर केन्द्रीय सहकारी बैंक लि.' ने 1 जुलाई 1999 को 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' जारी कर सहकारी साख के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी शुरूआत की। किसानों का इस क्रेडिट कार्ड के प्रारम्भिक वर्ष में ही 75,438 काश्तकारों को लाभान्वित किया गया इसके बाद क्रेडिट कार्ड धारी किसानों की संख्या में निरंतर वृद्धि होती गई। बैंक द्वारा 2004 में विभिन्न अभियान चलाकर भी काश्तकारों को 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' वितरित किये गये। मई–जून 2006 तक श्रीगंगानगर व हनुमानगढ़ जिले के 2.51 लाख से भी अधिक काश्तकारों को 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' जारी किये गये हैं और इनके माध्यम से 30 हजार लाख से भी अधिक के अल्पकालीन ऋण वितरित किये गये। यह बैंक श्री गंगानगर व हनुमानगढ़ जिलों की कुल कृषि साख की 80 प्रतिशत पूर्ति अकेले ही कर रहा है। दी गंगानगर केन्द्रीय सहकारी बैंक लि. द्वारा विभिन्न वर्षों में जारी सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड व अल्पकालीन ऋण वितरण का विवरण निम्न प्रकार है –

उपरोक्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि बैंक द्वारा वितरित किये जाने वाले अल्पकालीन ऋण व 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' धारी किसानों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है। सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड शुरू होने के पहले वर्ष, 1999–2000, में ही 75438 किसानों ने 12303.29 लाख रुपये का ऋण प्राप्त किया। 2000–01के सत्र में सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड धारी कृषकों की संख्या 115.49 प्रतिशत बढ़कर 62560 हो गई। इस प्रकार प्रत्येक आगामी वर्ष में सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड धारी किसानों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है। क्रेडिट कार्ड धारी किसानों की संख्या 2001–02 में बढ़कर 169500, 2002–03 में 172000, 2003–04 में 200800, 2004–05 में 246735 व 2005–06 में बढ़कर 251172 हो गई। इस प्रकार 1999–2000 की तुलना में 2005–06 में सहकारी किसान क्रेडिट धारी किसानों की संख्या में लगभग 3.32 गुणा वृद्धि हो गई। क्रेडिट धारी किसानों की संख्या में वृद्धि के साथ–साथ उनके द्वारा लिये जाने वाले ऋण में भी वृद्धि हुई है। 1999–2000 में बैंक द्वारा वितरित ऋण की मात्रा 12303.29 लाख रुपये की जो कि 2000–01 में बढ़कर 15233.56 लाख रुपये व 2001–02 में बढ़कर 17029.13 लाख रुपये हो गई। इस प्रकार 1999–2000 की तुलना में बैंक द्वारा वितरित ऋण में लगभग 1. 24 गुणा वृद्धि हुई। 2002–03 में सहकारी किसान क्रेडिट कार्डधारी काश्तकारों की संख्या में तो वृद्धि हुई परन्तु बैंक द्वारा वितरित ऋण गत वर्ष की अपेक्षा 10.11 प्रतिशत राशि घटकर 15308.03

सहकारी किसान क्रेडिट कार्डधारी किसानों की संख्या

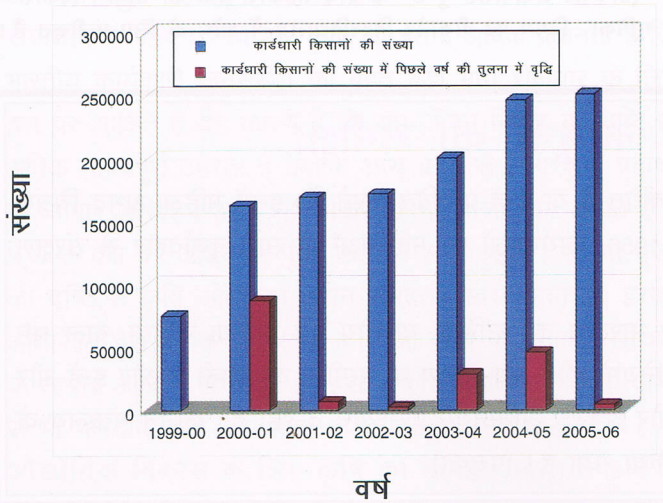

सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड के माध्यम से अल्पकालीन वितरित ऋण (दी गंगानगर केन्द्रीय सहकारी बैंक द्वारा)

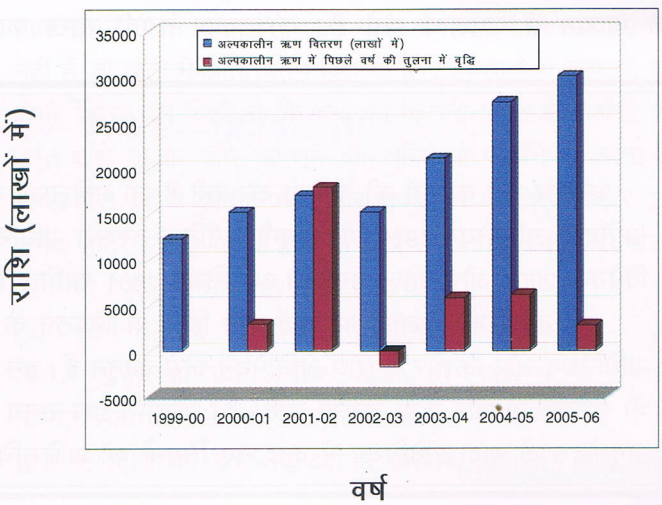

लाख रुपये रह गई। परन्तु आगामी वर्षों में बैंक द्वारा वितरित ऋण राशि में निंरतर वृद्धि का रुख बना हुआ है। बैंक द्वारा सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड के माध्यम से 2003–04 में 21119. 91 लाख रुपये, 2004–05 में 27283.75 लाख रुपये एवं 2005–06 में 30082.81 लाख रुपये का ऋण वितरित किया गया। इस प्रकार बैंक द्वारा वितरित ऋण में 1999–2000 की अपेक्षा 2005–06 में लगभग 2.45 गुणा वृद्धि हुई है। इस प्रकार निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बैंक सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड के माध्यम से लाखों कृषकों को ऋण उपलब्ध करवा रहा है और इससे निंरतर प्रगति हो रही है।

परम्परागत कृषि साख उपलब्ध करवाने वाले साहूकार व महाजन कृषकों को 20 से 30 प्रतिशत की दर पर ऋण उपलब्ध करवाते हैं जबकि यह केन्द्रीय सहकारी बैंक 11 प्रतिशत की दर पर काश्तकारों को ऋण उपलब्ध करवा रहा है परन्तु वर्तमान में तो काश्तकारों को मात्र 7 प्रतिशत की दर पर सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड के माध्यम से ऋण उपलब्ध करवाया जा रहा है। इसी कारण सस्ती दर पर सहकारी ऋण उपलब्ध होने से बैंक की 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' योजना के प्रति किसानों का उत्साह बढ़ रहा है। यह बैंक वर्ष में दो बार 30 जून व 31 दिसम्बर को ऋण वसूली करता है। ऋण वसूली के समय काश्तकार को ब्याज समेत ऋण चुकाना होता है परन्तु 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' धारी काश्तकार ऋण चुकाने के एक सप्ताह बाद पुनः निर्धारित साख सीमा तक ऋण प्राप्त कर सकता है। जिन किसानों के पास 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' हैं वह कृषक मित्र योजना के तहत प्राप्त ऋण को चुकाने के 24 घण्टे बाद ही निर्धारित साख सीमा तक पुनः ऋण प्राप्त कर सकता है।

'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस योजना का लाभ कृषक ही उठाते हैं और कृषक को नगदी साख के साथ खाद, बीज व कीटनाशक आदि समिति के माध्यम से उपलब्ध होते हैं। काश्तकार नगदी साख का प्रयोग कृषि कार्यों में न करके कई बार अन्य घरेलू कार्यों में खर्च कर लेता है, परन्तु समिति से उपलब्ध खाद, बीज व कीटनाशक का प्रयोग तो उसे कृषि कार्यों पर करना पड़ता है क्योंकि बैंक द्वारा स्वीकृत साख में 70 प्रतिशत नगद व 30 प्रतिशत साख का खाद, बीज व कीटनाशक उपलब्ध करवाया जाता है। काश्तकारों को अच्छी खाद, बीज व कीटनाशक उपलब्ध होने से निश्चित रूप से कृषि उत्पादन बढ़ता है पुरातन समय से आढ़तीये और महाजन कृषक का तीन प्रकार से शोषण करते आए हैं। एक तरफ तो आढ़तीये और महाजन कृषक को मंहगी ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध करवाते थे दूसरी तरफ कृषक खाद, बीज, कीटनाशक व अन्य घरेलू सामान उस महाजन/आढ़तीये से ऊंचे मूल्य पर खरीदने को विवश था। इसके साथ–साथ कई बार कृषक को घटिया सामान भी आढ़तीये/महाजन उसकी मजबूरी का फायदा उठा कर बेच देते थे। कृषकों का तीसरे प्रकार का शोषण महाजन/आढ़तीये उनकी फसल को स्वयं सस्ते मूल्य पर खरीदकर करते थे। यदि ये स्वयं फसल नहीं खरीदते तो ऊंची दलाली लेकर कृषक की फसल सस्ते मूल्य पर बिकवा देते थे। इससे किसानों का निरंतर शोषण होता था। परन्तु दी गंगानगर केन्द्रीय सहकारी बैंक लि.द्वारा आसानी से 'सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड' के तहत ऋण मिलने से काश्तकार किसी का मोहताज नहीं रहा है। वह अपनी फसल उचित मूल्य पर कहीं भी बेच सकता है जिससे वह अधिक लाभ कमा सकता है। काश्तकार प्राप्त ऋण से आधुनिक कृषि यन्त्र खरीदकर कृषि में आधुनिक तकनीक का प्रयोग करके अधिक उत्पादन कर सकता है। इस प्रकार 'दी गंगानगर केन्द्रीय सहकारी बैंक लि. ' ने अपने सहकारी किसान क्रेडिट कार्ड के माध्यम से लाखों किसानों को लाभांवित किया है जिससे साहूकारों व महाजनों द्वारा किसानों के शोषण में कमी आई है।

(प्रोफेसर संदीपसिंह मुण्डे "केन्द्रीय सहकारी बैंक की ग्रामीण विकास में भूमिका" विषय पर बीकानेर विश्वविद्यालय में शोध के लिए पंजीकृत हैं।)

महिलाओं–बच्चों संबंधी कानूनों की समीक्षा

सरकार ऐसे कानूनों की समीक्षा कर रही है जो महिलाओं से संबंधित हैं या उन्हें प्रभावित करते हैं। इनमें महिला अभद्र चित्रण (प्रतिबंध) अधिनियम 1986, गैरकानूनी अनैतिक तस्करी अधिनियम 1956, कार्यस्थलों पर महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार से संरक्षण विधेयक 2007 और दहेज उन्मूलन अधिनियम 1961 शामिल हैं।

बच्चों के खिलाफ अपराधों और हिंसा से निपटने के लिए भारतीय दंड संहिता, भारतीय दंड प्रक्रिया संहिता, बाल श्रम अधिनियम और किशोर अपराध अधिनियम जैसे कानून हैं। इन अधिनियमों की समय–समय पर समीक्षा की जाती है और इन्हें और भी प्रभावकारी और कड़ा बनाया जाता है। मंत्रालय इस समय किशोर अपराध अधिनियम पर ध्यान दे रहा है। कानून मंत्रालय के अनुमोदन के बाद अधिनियम में कुछ नए नियमों को अधिसूचित किया गया है। (पसूका)

कृषि विकास में विपणन और भाण्डागार

जयश्री जैन

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। पिछले दो दशकों से अधिक अवधि में औद्योगीकरण के संगठित प्रयास के बावजूद कृषि का गौरवपूर्ण स्थान बना हुआ है। देश का सबसे बड़ा उद्योग होने के कारण, कृषि देश की 65 प्रतिशत जनता की जीविका का स्त्रोत है। इस जीविका के स्त्रोत को बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि उचित और मजबूत कृषि विपणन तथा भाण्डागार की व्यवस्था की जाये जिससे कि कृषि प्रधान देश होने की बात सही साबित हो सके।

कृषि विपणन– विपणन से आशय उस बाजार से है जहां पर वस्तुओं के उत्पादन से पूर्व से लेकर विक्रय तक की समस्त कार्य विधियों को सम्मिलित किया जाता है। विपणन वह व्यापक शब्द है जिसमें विक्रय और वितरण दोनों सम्मिलित होता है। अतः कृषि विपणन वह बाजार है जहां कृषि का आदान–प्रदान किया जाता है।

कृषि भाण्डागार– कृषि भाण्डागार वह स्थान है जहां पर कृषि को संगठित किया जाता है, जिसकी आवश्यकता हमारे देश में बहुत पहले से महसूस की जा रही है। भण्डारगृह जितने अच्छे और अधिक होंगे उतनी ही अच्छी तरह से कृषि का विपणन किया जा सकेगा।

भारत में कृषि का महत्व

राष्ट्रीय आय में कृषि का हिस्सा– देश के घरेलू उत्पाद में खेती का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है। आर्थिक विकास में तेजी आने के फलस्वरूप अन्य क्षेत्रों के अनुपात में अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि होने से खेती का प्रतिशत योगदान पिछले वर्षों में घट गया है और विकास की गति में तेजी आने से इसका सापेक्ष प्रतिशत भाग और घटेगा। लेकिन मात्रात्मक दृष्टि से इसका योगदान अभी भी बहुत महत्वपूर्ण ठहरता है।

रोजगार व जीवन निर्वाह– कृषि की इतनी अधिक प्रधानता है कि भारतीय कार्यकारी जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग रोजगार के लिए इस पर आश्रित है यह कारण है कि यह जीवन निर्वाह की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण ठहरता है क्योंकि अन्य बहुत से लोग कृषि पदार्थों के व्यापार, परिवहन आदि में लगकर अपनी आजीविका कमाते हैं।

पूंजी– देश की अधिकांश पूंजी खेती में लगी हुई है। स्थायी पूंजी की दृष्टि से कृषि जोतों का स्थान संभवतः सबसे ऊंचा है। इसके अतिरिक्त देश की करोड़ों रुपये की पूंजी खेती के औजारों, सिंचाई के साधनों आदि में लगी हुई है। इस प्रकार निवेशित पूंजी की दृष्टि से भी भारतीय कृषि का स्थान कम महत्वपूर्ण नहीं ठहरता है।

औद्योगिक विकास के लिए कृषि का महत्व– भारत में कृषि के महत्व का कारण यह है कि इससे हमारे प्रमुख उद्योगों को कच्चा माल मिलता है। सूती और पटसन, वस्त्र उद्योग, चीनी, वनस्पति तथा बागान उद्योग में सब कृषि पर निर्भर है और भी ऐसे अनेक उद्योग हैं जो कृषि पर अप्रत्यक्ष रूप में निर्भर हैं।

अनाज व चाय– देश की विशाल जनसंख्या के लिए अन्न जुटाने का काम भी यहां खेती के द्वारा सम्पन्न होता है। भारत में मवेशियों की संख्या भी बहुत अधिक है। इनके लिए चारा भी मुख्य रूप से देश की खेती है।

विदेशी व्यापार में कृषि का महत्व– विदेशी व्यापार की दृष्टि से भी हमारी खेती का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। हमें खेती से निर्यात व्यापार की मुख्य–मुख्य वस्तुएं प्राप्त होती हैं जो विदेशी मुद्रा के अर्जन में विशेष हाथ बंटाती है। स्थूल रूप में कुल निर्यात में कृषि वस्तुओं का अनुपात लगभग 50 प्रतिशत है और कृषि से बनी वस्तुओं का अनुपात लगभग 20 प्रतिशत है। इस प्रकार भारत के निर्यात में कृषि और उससे संबंधित वस्तुओं का कुल भाग लगभग 70 प्रतिशत है।

आर्थिक आयोजन में कृषि क्षेत्र का कार्यभाग– राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्व के और भी अनेक कारण हैं। कृषि भारत की परिवहन–व्यवस्था का मुख्य अवलम्ब है क्योंकि रेलवे और सड़क मार्ग का अधिकांश व्यापार कृषि वस्तुओं को लाना–ले जाना है। सरकार के बजट अथवा सरकारी आय और व्यय पर भी कृषि का विशेष प्रभाव दिखाई पड़ता है।

भारत में कृषि विपणन एवं भाण्डागार– भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व स्पष्ट परिलक्षित होता है। भूमि सुधार की भांति बाजार और बिक्री की सुविधाएं भी किसानों को कृषि विकास के लिए अभिप्रेरित करने की दृष्टि से विशेष महत्व रखती हैं। यदि बाजार में माल की बिक्री से प्राप्त होने वाली रकम के संबंध में किसान निश्चित नहीं हैं, तो खेती में अतिरिक्त निवेश के लिए किसानों में तत्परता कम होगी, फसल की बिक्री से किसानों को कितनी प्राप्ति हो सकेगी, यह बहुत कुछ बाजार और विपणन की सुविधाओं पर निर्भर करता है। भारत जैसे देश में कृषि विपणन और भाण्डागार के लिए सरकार द्वारा अनेक कदम उठाए गए हैं फिर भी कृषि उपज की बिक्री–व्यवस्था में आज भी अनेक गम्भीर दोष दिखाई देते हैं।

कृषि विपणन एवं भाण्डागार के दोष

वित्त–सुविधाओं का अभाव– बुआई से लेकर बिक्री तक की किसानों की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त मात्रा में वित्त की सुविधाएं देश में उपलब्ध नहीं है। इस कारण

फसल काटने के तुरन्त बाद ही वे माल बेचने के लिए बाध्य हो जाते हैं जिससे उनको उचित कीमत नहीं मिल पाती।

दोषपूर्ण संग्रहण व्यवस्था– देश में फसल को संग्रह करने की सुविधाएं बहुत थोड़ी हैं, और जो हैं भी वे बहुत अवैज्ञानिक और दूषित हैं। गांवों में कृषि उपज खत्तियों, मिट्टी के बर्तनों तथा कच्चे कोठों में जमा की जाती हैं जहां उसकी सुरक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं होता। फलस्वरूप, उपज का काफी बड़ा भाग सीलन, चूहे, दीमक व अन्य कीड़े–मकोड़े आदि के कारण नष्ट हो जाता है।

श्रेणी विभाजन का अभाव एवं दड़ा प्रणाली– भारत में कृषि उपज की श्रेणी अनेक कारणों से नीची रही है। इसके अतिरिक्त किसान अज्ञानता और उपज थोड़ी होने के कारण श्रेणी विभाजन की ओर ध्यान नहीं देते। अक्सर समस्त उपज एक ही ठेरी के रूप में, जिसे दड़ा प्रणाली कहते हैं, बेच दी जाती थी। इस प्रकार किसान को उत्तम श्रेणी की उपज के लिए भी कम मूल्य मिलता था।

अल्प विकसित परिवहन व्यवस्था– देश में परिवहन संबंधी स्थिति भी बहुत असंतोषजनक है। देश के कई भागों में न तो रेल जाती है और न वहां पक्की सड़कें हैं। कुछ स्थानों पर तो कच्ची सड़कें भी नहीं हैं। इस कारण खेत से घर तक और गांव से मंडियों तक उपज को ले जाने में बड़ी कठिनाई होती है।

मध्यस्थों की बड़ी संख्या– भारत में कृषि उपज की विपणन व्यवस्था में मध्यस्थों की संख्या इतनी अधिक रही है कि कई बार किसान को उपभोक्ताओं द्वारा दिए जाने वाले मूल्य का लगभग 50 प्रतिशत भाग ही मिल पाता था।

दोषयुक्त तौल बांट– सरकारी कानून के बावजूद जिनके अन्तर्गत एक जैसे मानक तौल व बांटों का प्रयोग अनिवार्य बना दिया गया है, देश के विभिन्न भागों में तौल व बांटों में बहुत अन्तर पाया जाता है। कुछ छोटी–छोटी मंडियों में पत्थर के बांट पाए जाते हैं जिनकी तौल प्रायः कम होती है। कहीं–कहीं तो दो प्रकार के बांट प्रयोग में लाए जाते हैं– एक माल खरीदने के लिए जो वजन में भारी होते हैं और दूसरे माल बेचने के लिए जो वजन में हल्के होते हैं।

अनियमित मण्डियों में कपटपूर्ण रीतियां– देश में अब भी अनियन्त्रित मंडियों की संख्या बहुत अधिक है। इन मंडियों में आढ़तिए और दलाल किसान की अज्ञानता का लाभ उठाकर उसके साथ विविध प्रकार से कपट करते हैं। तराजू और बांटों की गड़बड़ी, उपज का एक अंश नमूने के रूप में लेकर वापस न करना, कपड़े के नीचे हाथ के इशारों से मूल्य निर्धारित करना, रामलीला, पाठशाला, गौशाला, प्याऊ, तुलाई, आढ़त, बोराबन्दी आदि के लिए अनुचित कटौती काटना, मंडियों की कुछ प्रचलित कपटपूर्ण रीतियां हैं।

मूल्य संबंधी सूचना का अभाव– स्वतंत्रता के बाद भी कई वर्षों तक बहुत से किसानों को विभिन्न मण्डियों में प्रचलित कीमतों की सही सूचना नहीं मिल पाती थी।

कृषि विपणन में सुधार के लिए उठाये गए कदम–

सहकारी बिक्री– भारत जैसे देश में, जहां अधिकांश किसान बहुत गरीब हैं और खेती बहुत छोटे पैमाने पर करते हैं, कृषि उपज की बिक्री का सहकारी समितियों द्वारा प्रबंध विपणन–क्षेत्र में सुधार लाने का सर्वोत्तम उपाय है।

विनियमित बाजार– दूसरी बड़ी आवश्यकता सरकारी कानूनों के अन्तर्गत देश में नियंत्रित अथवा विनियमित मंडियों की स्थापना की है। ऐसी मंडी का प्रबंध बाजार समिति के हाथ में होता है जिसे एक विशेष समय के लिए सरकार द्वारा नियुक्त किया जाता है। इसमें राज्य सरकार, स्थानीय संस्थाओं, व्यापारियों, दलालों या कमीशन एजेंटों और किसानों आदि के प्रतिनिधि होते हैं। ये समितियां विपणन व्यवस्था सुधारने की दृष्टि से श्रेणी विभाजन को प्रोत्साहन देती हैं, खुली नीलामी पद्धति को लागू करती हैं, कपड़े के नीचे गुप्त भाव निर्धारण पर रोक लगाती हैं, प्रामाणिक बांटों के प्रयोग को अनिवार्य करती हैं, किसानों और व्यापारियों के बीच मतभेदों को दूर करने के लिए मध्यस्थता करती हैं।

गोदाम निर्माण व उपज–संग्रह की व्यवस्था– कृषि पदार्थों को गांवों से बाहर ले जाने एवं मंडियों में बिक्री से पूर्व उनके लिए पर्याप्त मात्रा में संग्रह सुविधाओं व गोदामों की व्यवस्था बहुत आवश्यक है। उत्तम बिक्री के लिए ठीक ढंग के गोदामों की समुचित व्यवस्था की उपादेयता निर्विवाद है। गोदामों में रखे माल के आधार पर किसान सहकारी ऋण समितियां या बैंकों से आसानी से उधार ले सकते हैं। गोदामों में ठीक से संग्रह किये गये पदार्थ काफी समय तक सुरक्षित रखे जा सकते हैं।

श्रेणी विभाजन एवं मानकीकरण– कृषि विपणन व्यवस्था में सुधार की दृष्टि से श्रेणी विभाजन तथा मानकीकरण का विशेष महत्व है। श्रेणी विभाजन के महत्व को स्वीकार करते हुए सरकार ने 1937 में कृषि उत्पादन (श्रेणी विभाजन एवं अंकन) कानून पास किया जिसके द्वारा विपणन तथा निरीक्षण निदेशालय को अधिकार दिया गया कि वह स्वीकृत मानकों के अनुसार श्रेणी विभाजन तथा अंकन करने की अनुमति किसी भी संस्था को दे सकता है।

मानक बांट और नाप तौल की अनिवार्यता– केन्द्रीय सरकार ने 1939 में मानक बांट अधिनियम पास किया जिसके अन्तर्गत राज्य सरकारों ने मानक बांटों को बढ़ावा देने के लिए कोशिश की लेकिन स्थिति में कोई सुधार नहीं आया। आगे चलकर देश भर में माप–तौल में एक रूपता लाने के उद्देश्य से 1956 में मानक माप–तौल अधिनियम पास किया गया और एक निश्चित कार्यक्रम के अनुसार मीट्रिक माप–तौल अथवा दशमलव प्रणाली को विभिन्न उद्योगों तथा प्रदेशों में लागू करना निश्चित किया गया। वर्ष 1962 से सारे देश में मीट्रिक बांटों का प्रयोग अनिवार्य कर दिया गया।

बाजार संबंधी सूचनाओं की समुचित व्यवस्था– किसान तथा

मण्डी में काम करने वाले आदि सभी को बाजार संबंधी परिस्थितियों, कीमतों, देश–विदेश की मांग आदि के विषय में ठीक और नवीनतम सूचनाओं को शीघ्र एवं नियमित रूप से उपलब्ध कराने के लिए समुचित व्यवस्था का होना भी बहुत आवश्यक है। किसानों को ठीक कीमत दिलाने तथा मण्डी में दोषयुक्त व्यवहारों व सौदों को खत्म करने के लिए यह बड़ा महत्वपूर्ण कदम है।

सरकारी खरीद तथा समर्थन कीमतों का निर्धारण– यह सुनिश्चित करने के लिए कि किसानों को अपने उत्पाद की सही कीमत मिले, सरकार समय–समय पर विभिन्न कृषि वस्तुओं के लिए न्यूनतम समर्थन कीमतों और वसूली कीमतों की घोषणा करती रहती है। इन कीमतों का निर्धारण, कृषि लागत और कीमत कमीशन की सिफारिशों के आधार पर किया जाता है।

फल और सब्जी विपणन– भारत में कृषि विपणन सुधारों के अन्तर्गत ज्यादातर खाद्यान्नों पर ध्यान दिया गया है तथा फलों एवं सब्जियों के विपणन की अनदेखी की गई है। इसके परिणामस्वरूप फलों एवं सब्जियों के बाजारों में बहुत से मध्यस्थ काम कर रहे हैं जिसके कारण उपभोक्ता द्वारा दी गई कीमत और उत्पादक को मिलने वाली कीमत में भारी अन्तर है। इससे स्पष्ट है कि कृषि विपणन में फल और सब्जी विपणन क्षेत्र एक ऐसा क्षेत्र है जिस पर सरकार को अधिक ध्यान देने की जरूरत है।

भारत में भाण्डागार की स्थिति– भारत में भाण्डागार सुविधाओं को विकसित करने के महत्व को बहुत समय पहले अनुभव कर लिया गया था। भाण्डागार सुविधाओं द्वारा एक ओर तो दोषपूर्ण संग्रहण से होने वाली हानि को कम किया जा सकता है और दूसरी ओर यह किसानों को उधार धप्त कराने के लिए एक सुविधाजनक उपकरण भी है। अखिल भारत ग्राम उधार सर्वेक्षण समिति की सिफारिशों को भारत सरकार ने स्वीकारते हुए 1956 में राष्ट्रीय सहकारी विकास एवं भाण्डागार बोर्ड और 1957 में केन्द्रीय भाण्डागार निगम की स्थापना की इसके पश्चात सभी राज्यों में राष्ट्रीय भाण्डागार निगम स्थापित किए गए।

वर्ष 1960–61 में भारत में केवल 40 सामान्य भाण्डागार थे जिनकी क्षमता 1 लाख टन थी। वर्ष 1993–94 तक सार्वजनिक क्षेत्र की तीनों इकाइयों द्वारा 322 लाख टन की भाण्डागार क्षमता कायम की गयी जो कि सन् 2000 के अन्त तक 702 लाख टन हो गयी। वर्ष 2003–04 तक ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकों द्वारा 4,850 भाण्डागार प्रॉजेक्टों के लिए स्वीकृति दी गयी जिन पर 1300 करोड़ रुपये का निवेश होगा। योजना की अवधि बढ़ाकर दसवीं योजना के अन्त तक अर्थात वर्ष 2006–07 तक कर दी गयी है। इस योजना से किसानों को यह लाभ हुआ है कि वे अपने खेत के पास ही वस्तुओं को स्टोर कर लें और इनके रेहन के विरुद्ध बैंकों से ऋण प्राप्त कर लें तो इस प्रकार मजबूरी में कटाई के फौरन बाद फसल नहीं बेचनी पड़ेगी।

भाण्डागारों के अतिरिक्त, शीत गोदाम भी हैं जिनके द्वारा नाशवान वस्तुओं जैसे प्याज, आलू, फल, सब्जियां, मछली, गोश्त, दुग्ध पदार्थ आदि का आपद विक्रय न करना पड़े। इस समय देश में कुल 2,970 शीत भाण्डागार हैं जिनकी क्षमता लगभग 78 लाख टन है। इनमें से सहकारी शीत भाण्डागारों की संख्या 243 है और इनकी क्षमता 7 लाख टन है।

निष्कर्ष– उपरोक्त समस्त विश्लेषण इस बात की ओर इशारा कर रहा है कि भारतीय कृषि–क्षेत्र की एक अन्य बड़ी समस्या कृषि–उपज के विपणन या बिक्री तथा उचित भाण्डागार की है। कृषि उत्पादन एवं किसानों की आय में वृद्धि लाने और इस प्रकार देश के आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए कृषि विपणन की समस्या का विश्लेषण और समाधान बहुत आवश्यक है। कृषि विपणन एवं भाण्डागार व्यवस्था में सुधार के लिए उठाये गये कदम कृषि विपणन के सुधार और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं और यह कहा जा सकता है कि देश के अन्दर इसके लिए प्रयास किये जा रहे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इस कार्य को संगठित करके और आगे बढ़ाया जाए, विशेष रूप से वर्तमान समय में जबकि विश्व अर्थव्यवस्था के साथ भारतीय अर्थव्यवस्था जुड़ गई है। विश्व बाजार से भरपूर लाभ उठाने के लिए विपणन के क्षेत्र में सुधार लाना और भी जरूरी बन गया है। क्योंकि भारत कृषि प्रधान देश है, जहां की जनसंख्या किसी न किसी प्रकार से कृषि से जुड़ी होने के कारण कृषि विपणन में सुधार से केवल किसानों को ही नहीं, बल्कि सारे समाज को लाभ प्राप्त होगा।

(लेखिका माता गुजरी महिला महाविद्यालय जबलपुर में सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) हैं।)

कुरुक्षेत्र मंगवाने का पता

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड-4, तल-7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

एक अरब भारतीय
एक राष्ट्र और
एक उत्सव...

...गणतंत्र दिवस की शुभकामनाएं

श्रीमति शीला दीक्षित
मुख्यमंत्री, दिल्ली

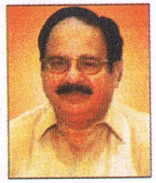
डा. अशोक कुमार वालिया
ऊर्जा एवं वित्त मंत्री

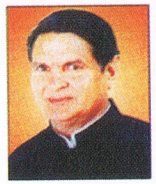
डा. योगानन्द शास्त्री
स्वास्थ्य एवं समाज कल्याण मंत्री

श्री मंगत राम सिंघल
उद्योग एवं श्रम मंत्री

श्री राज कुमार चौहान
राजस्व एवं विकास मंत्री

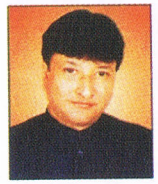
श्री हारून युसूफ
परिवहन, खाद्य एवं आपूर्ति मंत्री

श्री अरविंदर सिंह
शिक्षा एवं पर्यटन मंत्री

सूचना एवं प्रचार निदेशालय

दिल्ली सरकार
दिल्ली टीम - स्वप्न करे साकार

KH-03/08/3

भारत में भूमि सुधार कार्यक्रम का एक मूल्यांकन

डॉ. रमेश कुमार सिंह

एक कृषि प्रधान देश की समृद्धि अन्ततः इस बात पर निर्भर करती है कि वहां के निवासी प्रकृति द्वारा प्रदत मुक्त दान अर्थात भूमि को कितनी योग्यतापूर्वक प्रयोग करते हैं तथा उसकी किस तरह रक्षा करते हैं। यही नहीं, भूमि के उपयोग के तरीकों पर ही किसी देश के समाज अथवा सभ्यता के विकास का रूप निर्भर रहता है। 'भूमि सुधार कार्यक्रम' में मध्यस्थों की समाप्ति, काश्तकारी सुधार अर्थात् काश्तकार को भूमि पर स्वामित्व का अधिकार दिलाना, लगान की उचित दर का निर्धारण और उसकी बेदखली से रक्षा (भूधारण की सुरक्षा) के साथ–साथ जोतों की सीमाबन्दी, चकबन्दी, सहकारी खेती, भूमि का पुनर्वितरण तथा खेतिहर मजदूरों का पुनर्स्थापन आदि वे सभी कार्यक्रम सम्मिलित होते हैं जिनका उद्देश्य कृषि उपज को प्रोत्साहित करना, सुनियोजित विकास, सामाजिक न्याय एवं समानता, साथ ही गैर–कृषि उद्योगों का विकास करना है।

भारत में भूमि सुधार की शुरूआत तब हुई जब देश ने महसूस किया कि अधिसंख्य नागरिकों, खासकर ग्रामीण जनता, जिस के पास असमान विनिमय वाले बाजार में मोलभाव की शक्ति बहुत कम थी, के प्रति उसकी प्रत्यक्ष जिम्मेदारी है। स्वतंत्रता के पूर्व एवं समय देश में भूमि व्यवस्था सम्बन्धी रैयतवारी, महालवारी एवं जमींदारी प्रथाएं थीं जो ये प्रथाएं धीरे–धीरे कमियों के कारण स्वतः ही समाप्त हो गई। बाद में सरकार ने समय–समय पर नई भूमि सुधार नीतियां बनाई, जिनमें कुछ खामियां भी देखी गईं प्रगति भी हुई एवं उनका मूल्यांकन कर भूमि सुधार कार्यक्रम चलाए गए और सफलता हेतु सुझाव भी दिए गए।

साठ के दशक के मध्य में भूमि सुधारों का उत्साह तब मंद पड़ गया जब भारत को गंभीर रूप से अनाज की कमी का सामना करना पड़ा, खासकर देश के पूर्वी हिस्सों में। सरकार का ध्यान भूमि सुधार से हटकर अनाज का उत्पादन बढ़ाने पर केंद्रित हो गया, भूमि सुधार की योजनाएं प्रत्यक्ष रूप में तो शिथिल पड़ गई, लेकिन साठ के दशक के अंतिम वर्षों और सत्तर के दशक के शुरू में भूमि संबंधी ग्रामीण विद्रोह के पहले चरण के परिणामस्वरूप भूमि सुधार का मुद्दा एक बार फिर प्रमुख हो गया। 1972 में तत्कालीन प्रधानमंत्री ने ग्रामीण विद्रोह यानि नक्सलवाद की समस्या से निबटने के लिये मुख्यमंत्रियों की बैठक बुलाई। उस बैठक में भारत के तत्कालीन गृहमंत्री ने कहा – "हम हरित क्रांति को लाल क्रांति में तब्दील नहीं होने देंगे।" उस बैठक में भूमि की सीलिंग घटाने और परिवार आधारित सीलिंग लगाने, काश्तकारी सुधार और ऐसे ही अन्य उपाय अपनाने का फैसला किया गया, वे सारे कदम बहुत प्रगतिशील थे, न सिर्फ मौजूदा स्थिति के संदर्भ में, बल्कि उनके पीछे के सिद्धान्त और दर्शन के संदर्भ में भी। वे सिद्धांत और दर्शन आज भी सार्थक हैं। ध्यान देने की बात यह है कि हरित क्रांति के चरम पर जब भारत का सारा जोर अनाज के मामले में आत्मनिर्भर होने पर था ताकि यू एस पी एल .480 की जंजीरों को तोड़ा जा सके, तो भारत सरकार ने भूमि सीलिंग में भारी कमी करने का फैसला किया। इसके बाद ग्रामीण हिंसा का पहला दौर अपने आप खत्म हो गया। अस्सी के दशक के मध्य से जब उदारीकरण ने धीमी गति से भारतीय अर्थव्यवस्था में प्रवेश करना शुरू किया और फिर 1991 से जब उसने तेज गति पकड़ी तो भूमि सुधार का मुद्दा कहीं पीछे चला गया और इस एजेंडे को भूला दिया गया। सवाल यह उठता है कि क्या भूमि सुधार एल पी जी के मौजूदा दौर में अप्रासंगिक हो गया है? इस पर गंभीरता से विचार करना होगा।

भूमि सुधार नीति

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय विभिन्न प्रकार की भूमि व्यवस्थाएं थीं जिसके परिणामस्वरूप वास्तविक काश्तकारों एवं भूमि स्वामी के बीच कई बिचौलिए आ जाते थे जो भूमि उपज का एक बड़ा भाग लगान के रूप में लेते थे, लेकिन फिर भी काश्तकार को प्रतिवर्ष जोतने की गारण्टी नहीं देते थे जिससे भूमि में स्थायी सुधार नहीं हो पाता था। अतः स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सरकार का ध्यान इस ओर गया।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में राज्यों द्वारा भूमि सुधार योजना की रूपरेखा बनाने के लिए कहा गया था, जबकि दूसरी योजना में मध्यस्थ किरायेदारों की समाप्ति, काश्तकारी व्यवस्था में सुधार, भूमि की उच्चतम सीमाओं का निर्धारण, चकबन्दी और कृषि व्यवस्था के पुनर्गठन की बात कही गयी लेकिन तीसरी, चौथी व पांचवी योजना में भूमि सुधार कार्यक्रमों को तेजी से लागू करने पर जोर दिया गया। छठवीं योजना में यह व्यवस्था की गयी कि

- जिन राज्यों में भूमिहीन कृषकों को मालिकाना हक देने के नियम नहीं है, वहां नियम बनाए जाएंगे।
- अधिकतम जोत कानून लागू होने से जो अतिरिक्त भूमि सरकार के अधिकार में आ गयी है उसे भूमिहीनों में वितरित किया जाएगा।
- भूमि संबंधी आंकड़ों को सम्मिलित करने एवं उन्हें अद्यतन करने के लिए एक कार्यक्रम चलाया जाएगा।
- चकबन्दी का कार्यक्रम चलाया जाएगा और भूमिहीन श्रमिकों के मकानों के लिए स्थान की व्यवस्था की जाएगी।

सातवीं योजना में वर्तमान भूमि कानूनों को कड़ाई से लागू करने की बात कही गयी। आठवीं योजना में भूमि सुधार के पांच सिद्धांतों का पालन करने की बात कही गयी, वे सिद्धांत थे–मध्यस्थों का अंत, काश्तकारी सुधार, अतिरिक्त भूमि का पुनः वितरण, चकबंदी व भू–स्वामित्व रिकार्ड को अद्यतन करना।

"नौवीं पंचवर्षीय योजना में कहा गया है कि "अतिरिक्त भूमि को खोजने एवं वितरित करने के लिए सभी संभव प्रयास करने होंगे और अधिकतम जोत के कानूनों को सख्ती से लागू करना होगा। अनुपस्थित जमींदारों को समाप्त करने के लिए सभी छिद्र बन्द करने होंगे तथा कार्यान्वयन मशीनरी को मजबूत बनाना होगा और राजस्व न्यायालयों में अधिनिर्णयण संबंधी विवादों को तेजी से सुलझाना होगा। मजदूरों और फसल सहभाजकों के अधिकारों को रिकार्ड करने की आवश्यकता है और इस प्रकार उन्हें पट्टे की सुरक्षा प्रदान की जा सकती है। केवल इसी से कृषि में विनियोग बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन उपलब्ध कराया जा सकता है जैसा कि देश के कुछ भागों के अनुभव से सिद्ध हुआ है। गरीबों को, विशेषकर स्त्रियों को व्यर्थभूमियों और साझी सम्पति संसाधनों के वितरण में प्राथमिकता देनी होगी"।

भूमि सुधार कार्यक्रमों की प्रगति

भारत में भूमि सुधार कार्यक्रमों की प्रगति निम्नलिखित रही है:–

- मध्यस्थों तथा जमींदारों का उन्मूलन :– भूमि सुधार प्रयत्नों में सबसे पहला प्रयत्न मध्यस्थों व जमींदारों की समाप्ति के लिए किया गया। इस संबंध में मद्रास में 1948 में, मुम्बई व हैदराबाद में 1949–50 में, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा असम में 1951, पंजाब, राजस्थान व उड़ीसा में 1952 में तथा हिमाचल प्रदेश, कनार्टक व पश्चिम बंगाल में 1954–55 में संबंधित अनिधनियम पारित किए गए।

इस विभिन्न राज्य अधिनियमों के अन्तर्गत लगभग दो करोड़ काश्तकारों का राज्य के साथ सीधा संबंध हो गया और उन्हें मालिकाना हक दे दिए गए हैं तथा लगभग 60 लाख हेक्टेयर भूमि भूमिहीन कृषकों को वितरित की गई। विभिन्न राज्य सरकारों ने जमींदारी उन्मूलन के लिए जो अधिनियम बनाए थे उनमें निम्नलिखित विशेषताएं थी–

- अधिकारों का उन्मूलन एवं क्षतिपूर्ति– जम्मू एवं कश्मीर राज्य को छोड़कर शेष सभी राज्यों में जमींदारों के अधिकारों का उन्मूलन कर दिया गया और इसके बदले में उनको मुआवजा या क्षतिपूर्ति दी गयी।
- क्षतिपूर्ति का आधार – जमींदारों को क्षतिपूर्ति का आधार अलग–अलग राज्यों में अलग–अलग रखा गया जैसे उत्तर प्रदेश में आधार 'शुद्ध सम्पति' रखा गया था, जबकि असम, राजस्थान एवं मध्य प्रदेश में 'शुद्ध आय' था। कुछ राज्यों में बड़े जमींदारों को निम्न दर से व छोटे जमींदारों को ऊंची दर से क्षतिपूर्त्ति की गयी।
- क्षतिपूर्ति का भुगतान – क्षतिपूर्ति का भुगतान कुछ राज्यों द्वारा पूर्णतः नकदी में किया गया, जबकि कुछ राज्यों द्वारा नकदी व बाण्डों में किया गया। जिन राज्यों में बाण्डों द्वारा भुगतान किया गया उन्होंने अपने राज्यों में 'जमींदारी उन्मूलन कोष' की स्थापना की। इस कोष में उस रकम को जमा किया गया जो कृषक ने भूमिधारी काश्तकार बनने के लिए सरकार को दी थी।
- वैयक्तिक कृषि के लिये भूमि रखने की छूट – विभिन्न अधिनियमों में यह व्यवस्था भी की गयी थी कि जो जमींदार जितनी भूमि को स्वयं जोतते थे उसे उनके पास ही छोड़ देने की छूट थी।
- सामान्य भूमि पर राज्य सरकारों का अधिकार – जमींदारी उन्मूलन के पश्चात् गांव में जो समान्य भूमि बची उस पर राज्य सरकारों का अधिकार हो गया।
- लगान देने का दायित्व – इस अधिनियमों में यह व्यवस्था भी की गयी थी कि जमींदारी उन्मूलन के पश्चात् काश्तकार अपनी भूमि पर लगान सीधा ही सरकार को देगा और लगान देने की उसकी स्वयं की जिम्मेदारी होगी।
- जमींदारी पुनः उत्पत्ति पर प्रतिबंध – जमींदारी व्यवस्था पुनः पनप न पाए इसके लिए अधिनियमों में यह व्यवस्था की गयी कि प्रत्येक काश्तकार के लिए भूमि को स्वयं ही जोतना अनिवार्य होगा, परन्तु विधवा, सेना में कार्य करने वाले सेविवर्ग, बन्दी व रोग से पीड़ित व्यक्ति अपनी भूमि को लगान पर दूसरों को दे सकते हैं।

काश्तकारी व्यवस्था में सुधार – देश में अनेक राज्यों में काश्तकारों के स्वामित्व अधिकारों को प्रदान करने या काश्तकारों द्वारा मुआवजा भरने पर स्वामित्व अधिकारों को प्राप्त करने संबंधी वैधानिक प्रावधान किए गए हैं। अब तक 156.30 लाख एकड़ क्षेत्र पर 124.22 लाख काश्तकारों के अधिकारों को सुनिश्चित किया गया है। जमींदारी उन्मूलन अधिनियमों के अन्तर्गत सैनिक, अवयस्क, विधवाओं तथा असमर्थ लोगों को यह छूट दी गयी है कि वे अपनी भूमि को दूसरे को जोतने के लिए दे सकते हैं, इस प्रणाली को पट्टेदारी प्रणाली कहते हैं। इस पट्टेदारी व्यवस्था में भी सुधार किए गए, जो निम्नलिखित हैं –

लगान नियमन कानून बनने के पूर्व पट्टेदार को कुल उपज का आधा भाग भूमि के मालिक को लगान के रूप में देना पड़ता था। अतः प्रथम योजना में इस बात की सिफारिश की गयी कि ऐसा लगान कुल उपज के 20 से 25 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। बाद में विभिन्न राज्यों ने इस संबंध में भिन्न–भिन्न अधिनियम बनाए जिनके अनुसार लगान की उचित दर पंजाब व हरियाणा में 33.5 प्रतिशत, मद्रास में सिंचित भूमि का 40 प्रतिशत तथा शुष्क भूमि का 25 प्रतिशत, आन्ध्र प्रदेश में सिंचित भूमि का 30 प्रतिशत व शुष्क भुमि का 25 प्रतिशत निर्धारित किया गया। जम्मू व कश्मीर में लगान की दर 25 प्रतिशत से 50 प्रतिशत तक है। शेष सभी राज्यों में वह दर 25 प्रतिशत से अधिक नहीं है।

इस प्रकार बिहार, गुजरात, केरल, मध्यप्रदेश, कर्नाटक, उड़ीसा, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश व महाराष्ट्र के अधिनियमों में यह व्यवस्था है कि भूमिपति को पट्टेदार के पास पट्टे वापस लेते समय कुछ भूमि अवश्य छोड़नी होगी।

कई राज्यों में पट्टेदारों को स्वामित्व अधिकार दिलाने के लिए वैधानिक व्यवस्था की गयी है जिसके अन्तर्गत पट्टेदारों को निर्धारित क्षतिपूर्ति के बाद भूमि पर स्वामित्व अधिकार प्राप्त हो सकता है।

पचास व साठ के दशकों में अधिकांश राज्यों में भूमि हकबंदी कानून बनाए गए, जिन्हें बाद में 1972 में केन्द्र द्वारा जारी दिशा–निर्देशों के अनुरूप संशोधित किया गया।

सितम्बर 2001 तक देश में 73.69 लाख एकड़ भूमि अतिरिक्त घोषित की गई, जिसमें से लगभग 64.95 लाख एकड़ भूमि को अधिगृहित किया गया और 53.79 लाख एकड़ भूमि को 54.84 लाख लाभार्थियों में वितरित किया गया जिनमें से अनुसूचित जाति से संबंधित 36 प्रतिशत लोग थे वे 15 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति से सम्बन्धित थे। इसके अतिरिक्त अभी तक 147.50 लाख एकड़ सरकारी बंजर, भूमिहीन ग्रामीण गरीबों में वितरित की जा चुकी है। इसके चार उद्देश्य हैं–

- बड़े भूखण्डों को उचित आकार के खण्डों में बदलना जिससे कि उनका प्रबन्ध उचित प्रकार से हो सके तथा उत्पादन बढ़ाया जा सके।
- अधिशेष भूमि को भूमिहीनों में बांटकर सामाजिक न्याय करना।
- अधिक व्यक्तियों को रोजगार सुविधाएं उपलब्ध कराना और
- अधिशेष बंजर भूमि पर कृषकों, कारीगरों व शिल्पकारों को घर बनाने की सुविधा देना।

भारत के प्रायः सभी राज्यों में कृषि जोत की सीमाबंदी से सम्बन्धित कानूनों में सीमाबन्दी के स्तर, सीमाबन्दी की इकाई (अर्थात् क्या भूमि का मालिक परिवार का प्रत्येक सदस्य अलग–अलग माना जाए या पूरा परिवार संयुक्त रूप से माना जाए) भूमि के हस्तान्तरण और सीमाबन्दी से छूट के बारे में जो व्यवस्थाएं की गई हैं, उनमें पर्याप्त अन्तर है।

अधिकतम जोत सीमा–निर्धारण के लाभ

- अधिकतम जोत निर्धारण से भूमि के असमान वितरण में कमी होती है।
- यह नियम केन्द्रीकरण की प्रवृत्रि को हतोत्साहित करते हैं और समाजवादी अर्थव्यवस्था की स्थापना में सहायक देते हैं तथा राजनीतिक जागृति की आकांक्षाओं को पूरा करते हैं।
- बड़ी–बड़ी जोतें समाप्त होने से समानता का वातावरण पैदा होता है जिससे कृषकों में पारस्परिक सहयोग का विकास होता है जो अन्त में सहकारी कृषि को प्रोत्साहन देता है।
- अधिकतम जोत नियम एक व्यक्ति के पास भूमि की मात्रा को कम करते हैं जिसके फलस्वरूप एक कृषक आय बढ़ाने के लिए गहन खेती करने को प्रोत्साहित होता है।
- अधिकतम जोत सीमा निर्धारण से कृषि उत्पादन को प्रोत्साहन मिलता है। गहन खेती की मात्रा बढ़ती है इससे कृषि उत्पादन बढ़ता है।
- इसके फलस्वरूप सरकार को जो भूमि बड़े किसानों से मिलती है उसे वह भूमिहीन कृषकों में बांट देती है, इससे उनको लाभ होता है।

अधिकतम जोत सीमा निर्धारण की हानियाँ –

- सबसे प्रमुख एवं पहला तर्क दिया जाता है कि अधिकतम जोत निर्धारण कानून बड़े खेतों को छोटे–छोटे खेतों में बदल देता है जिसके फलस्वरूप समाज बड़े पैमाने पर कृषि करने के लाभों से वंचित रह जाता है साथ ही कृषि में यंत्रीकरण सम्भव नहीं होता है।
- यदि भूमि की अधिकतम सीमा निर्धारित की जाती है तथा गैर कृषि भूमि जैसी गहरी भूमि की कोई सीमा निर्धारण नहीं की जाती है तो इससे आयों में विषमताएं पैदा हो जाती है, जो उचित नहीं है।
- यदि अधिकतम सीमा निर्धारित की जाती है, तो इससे बड़े किसानों में असंतोष उत्पन्न होगा, जो इस प्रजातांत्रिक युग में उचित नहीं है।
- इस अधिनियम के लागू होने से खेत छोटे–छोटे हो जाएंगे जिससे कृषक के पास विपणन योग्य अधिशेष कम रहेगा। नियमों के लागू होने से पहले जितनी भूमि जोती जाती है उतनी ही नियमों के लागू होने के बाद भी जोती जाएगी। अतः उत्पादन में कोई कमी नहीं होगी, लेकिन पहले जो कृषक बाजार में क्रय करके खाद्य पदार्थ खाते थे वे अब स्वयं उत्पादित करके अपने पास रख लेंगे, इससे विपणन योग्य अधिशेष में कमी होगी। निश्चय ही इससे स्वयं पोषण खेती की स्थिति पैदा होगी।
- इसके फलस्वरूप यदि किसान से अतिरिक्त भूमि ली जाएगी तो उसे क्षतिपूर्ति देने होगी जिसकी रकम करोड़ों व अरबों रुपयों में होगी जिसे राज्य सरकारें देने में कठिनाई महसूस करेगी।

भूमि के पुनर्गठन के लिए चार उपायों को काम में लिया गया है:

चकबन्दी – चकबन्दी वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा स्वामित्वधारी कृषकों को उनके इधर–उधर बिखरे हुए खेतों के बदले में इसी किस्म के कुल उतने ही आकार के एक या दो खेत लेने के लिए राजी किया जाता है। इस प्रक्रिया में एक कृषक के बिखरे हुए खेतों को एक स्थान पर दे दिया जाता है। यह चकबन्दी दो प्रकार से की जाती है। ऐच्छिक चकबन्दी और अनिवार्य चकबन्दी – ऐच्छिक चकबन्दी इस समय गुजरात, मध्य प्रदेश व पश्चिम बंगाल में लागू है, जबकि आन्ध्र प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम, मणिपुर, मेघालय, त्रिपुरा, नगालैण्ड, तमिलनाडु व केरल में चकबन्दी संबंधी कानून नहीं है परन्तु शेष सभी राज्यों में अनिवार्य चकबन्दी सम्बन्धी कानून लागू है।

सहकारी खेती – सहकारी खेती से तात्पर्य कृषकों के द्वारा सहकारिता के सिद्धांतों के आधार पर संयुक्त रूप से कृषि करने से है। भारत में सभी भूमि सुधारों का अन्तिम लक्ष्य सहकारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था की स्थापना करना है।

भू–दान – इस कार्यक्रम के जन्मदाता आचार्य विनोवा भावे थे। भूदान से तात्पर्य स्वेच्छा से भूमि के दान से है, इसके उद्देश्य बताते हुए आचार्य भावे ने एक बार कहा था कि यह न्याय तथा समानता पर आधारित है कि भूमि में सभी का अधिकार है, इसलिए हम भेंट में भूमि की भीख नहीं मांगते, बल्कि उस भाग की मांग करते हैं जिनमें निर्धनों को न्यायपूर्ण हक है।

भू–स्वामित्व का अद्यतन रिकार्ड – वर्ष 1988–89 में भू–अभिलेखों के कम्प्यूटरीकरण के लिए एक केन्द्र प्रायोजित योजना आठ जिलों में शुरू की गई थी। वर्त्तमान में यह योजना देश के 582 जिलों में लागू की गई हैं। अनेक राज्यों में उपयोगकर्त्ताओं तथा आम जनता के लिए अधिकारों के अभिलेखों को कम्प्यूटरीकृत प्रतियां उपलब्ध कराई गई

हैं। 1997–98 के दौरान इस योजना को तहसील/तालुका स्तर पर लागू करने का निर्णय लिया गया था, ताकि जनता को सामान्य तौर पर कम्प्यूटरीकृत भूमि रिकार्ड उपलब्ध कराने में सुविधा हो सके।

भूमि सुधार कार्यक्रमों का मूल्यांकन

देश में पिछले वर्षों में भूमि सुधार के कई कार्यक्रम बड़े उत्साह से प्रारम्भ किए गए जिनके अन्तर्गत जमींदारी उन्मूलन, अधिकतम जोत सीमा निर्धारण, चकबन्दी, सहकारी खेती, लगान नियम एवं पट्टे की सुरक्षा की व्यवस्था की गयी है।

संयुक्त राष्ट्र की भूमि संबंधी एक रिपोर्ट में कहा गया है कि "भारत में भूमि सुधार से हाल के अधिनियम संख्यात्मक दृष्टि से सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, इतने अधिनियम कहीं भी नहीं बनाए गए हैं। यह अधिनियम लाखों, करोड़ों कृषकों पर प्रभाव डालते हैं और भूमि के विशाल क्षेत्रों को अपने दायरों में सम्मिलित करते हैं, लेकिन ऐसा होने पर भी भूमि सुधार कार्यक्रमों की प्रगति धीमी रही है" जिसके निम्नलिखित कारण रहे –

- भूमि सुधार कार्यक्रमों की आलोचना इस आधार पर की जाती है कि विभिन्न राज्यों में भूमि सुधार संबंधी अधिनियम भिन्न–भिन्न है जिससे राष्ट्रीय स्तर पर उनको एक साथ क्रियान्वित नहीं किया जा सका है।
- बड़े भूमि स्वामियों ने भूमि सुधार कार्यक्रम लागू होने से अपना बचाव करने के उद्देश्य से सहकारी कृषि समितियां बना ली हैं, इस प्रकार अधिकांश कृषि सहकारी समितियां जाली हैं।
- भूमि सुधारों के फलस्वरूप काश्तकारों पर लगान ऊंची दरों से लगाया गया है जिससे किसान को उत्पादकता बढ़ाने की प्रेरणा नहीं मिली है।
- इन भूमि सुधार कानूनों का क्रियान्वयन तेज गति से न होने के कारण जमींदारों व अन्य निहित स्वार्थ वालों को इन कानूनों से बचने का पूरा–पूरा कानूनी समय या अवसर मिल जाता है और वे कानून के अनुसार अपनी–अपनी जोत कर लेते हैं।
- भूमि सुधारों में कई कार्यक्रम हैं जिनमें तालमेल बैठाने की आवश्यकता है जिसकी कोई चेष्टा नहीं की गयी है। इसी प्रकार जब अतिरिक्त भूमि बांटी जाती है, तब साख या वित्त की सुविधा उन भूमिहीन कृषकों को दिलाने का कोई प्रबंध नहीं किया जाता जिनको वह भूमि मिलती है।

भूमि सुधार कार्यक्रमों की सफलता के लिए कुछ सुझाव निम्नलिखित हैं :

- भूमि के संबंध में नवीन रिकार्ड तैयार किए जाए, ताकि स्वामित्व के प्रश्न पर मतभेद न हो सके।
- खेतिहर श्रमिकों व बंटाईवालों के संगठन बनाए जाए तथा उनके प्रतिनिधियों को भूमि सुधार कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में सम्मिलित किया जाय।
- जिन नए कृषकों को भूमि मिले इनके लिए वित्तीय संसाधनों जैसे कृषि साख का प्रबंध किया जाना चाहिए, ताकि वे उस भूमि का समुचित उपयोग कर सके।
- भूमि सुधार कानूनों का क्षेत्रीय भाषाओं के समाचार–पत्रों, आकाशवाणी व दूरदर्शन के माध्यम से प्रचार किया जाए, ताकि इन कानूनों को समझकर अधिकाधिक लाभ प्राप्त किया जा सके।
- राज्य, जिला व तहसील स्तर पर कुशल प्रशासनिक मशीनरी की स्थापना की जाए, लेकिन इसमें पटवारी को दूर रखा जाए।
- योजना आयोग ने सुझाव दिया है कि भूमि सुधार कानूनों को सफल बनाने हेतु निर्धारित कार्यक्रमानुसार क्रियान्वित किया जाए।
- भूमि सुधार कानूनों की कानूनी विधियों को सरल बनाया जाए, ताकि कानून बिना अड़चन ठीक से कार्य कर सके।

हमें वर्षों पहले शुरू किया गया भू–सुधारों के अपूर्ण कार्य को पूरा करना होगा और भूमिहीन गरीबों और छोटे किसानों को जिन्हें हरित क्रान्ति से कोई लाभ प्राप्त नहीं हुआ, सशक्त करना होगा। उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के आधार पर बनाया गया किला बालू के रेत पर खड़ा किया गया है। जब तक भारत के करोड़ों देशवासियों के हाथ में क्रयशक्ति नहीं दी जाती, उदारीकरण कायम नहीं रह सकता। निश्चय ही इसकी सफलता लाभान्वित वर्ग के संगठनों की ताकत और सरकार की इच्छा शक्ति पर निर्भर करेगी। सरकार की इच्छा शक्ति इतनी हो जो भू–सुधार के स्थायी उपाय द्वारा सभ्य समाज के लक्ष्य को प्राप्त कराने के लिए आरम्भिक उथल–पुथल और झटके झेलने की क्षमता रखती हो।

(लेखक जी.एन.मिश्रा कालेज रोहतास, बिहार में अर्थशास्त्र के व्याख्याता हैं)

कच्चे पटसन के लिए 2008–09 में न्यूनतम समर्थन मूल्य

आर्थिक कार्य मंत्रिमंडलीय समिति ने 2008–09 के मौसम के दौरान कच्चे पटसन का प्रति क्विंटल 1250 रुपये न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा की। यह तोसा देसी–5 ग्रेड के एक्स–असम पटसन के संदर्भ में है। वर्ष 2007–08 के मौसम के दौरान न्यूनतम समर्थन मूल्य 1055 रुपए प्रति क्विंटल था। इस तरह इसमें 195 रुपए का इजाफा किया गया है।

भारतीय पटसन निगम न्यूनतम समर्थन मूल्य के संबंध में केन्द्रीय नोडल एजेंसी का कार्य करता रहेगा और अगर कोई घाटा होता है तो उसकी भरपाई केंद्रीय सरकार करेगी। (पसूका)

पौष्टिक हरे चारे की उपज कैसे बढ़ाएं

डॉ. अंशु राहल

हमारे देश में कृषि एवं पशुधन एक दूसरे के पूरक हैं। एक अनुमान के अनुसार भारत में इस समय पशुधन की संख्या 492.63 मिलियन है। इस पशुधन की संख्या के हिसाब से विश्व में भारत का प्रथम स्थान है तथा साथ ही साथ दुग्ध उत्पादन (100 मिलियन टन, 2006–07) में भी प्रथम स्थान है, लेकिन उत्पादकता बहुत ही कम है। इसीलिए इनकी कार्य क्षमता एवं दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए पशुओं को पर्याप्त मात्रा में हरा चारा उपलब्ध कराना अति आवश्यक है, क्योंकि दूध उत्पादन क्षमता के साथ–साथ पशुओं की सेहत भी ठीक रहती है। दूसरे जायद के मौसम में खाली पड़ी जमीन एवं पानी का भी सही उपयोग हो जाता है। विशेषकर जायद ऋतु में अर्थात् अप्रैल–जून के मास में हरे चारे का अभाव अधिक हो जाता है जो कि हमारे पशुपालकों की एक प्रमुख समस्या है। इस समस्या के समाधान हेतु जायद ऋतु में डेरी फार्मों तथा उन किसानों के यहां पर जहां सिंचाई की सुविधा है कुछ क्षेत्रों में हरा चारा उगा लिया जाता है। परन्तु समूचे देश के कृषि क्षेत्र तथा चारे की समस्या को देखते हुए यह मात्रा नहीं के बराबर है। विशेष कारण यह है कि गर्मियों में दूध का उत्पादन बहुत कम हो जाता है। अतः दुग्धोत्पादन की कमी को सुधारने हेतु जायद ऋतु में चारा उत्पादन पर पर्याप्त ध्यान देने की आवश्यकता है।

जायद चारों में फसलों की तुलनात्मक पौष्टिकता

(प्रतिशत में)

फसल	प्रोटीन	कैल्शियम	फास्फोरस	रेशा	नाइट्रोजन रहित निष्कर्षीय पदार्थ
ज्वार					
60 दिन में कटाई	6.64	0.53	0.24	31.31	49.18
90 दिन में कटाई	4.62	0.32	0.32	34.05	56.10
बाजरा					
60 दिन में कटाई	10.00	0.65	0.31	28.52	40.73
90 दिन में कटाई	5.29	0.50	0.28	33.16	47.58
मक्का					
80 दिन में कटाई	10.20	0.70	0.29	25.00	56.00
मकचरी					
80 दिन में कटाई	12.00	0.65	0.28	19.90	55.30
90 दिन में कटाई	7.30	0.93	0.38	22.90	58.00
लोबिया					
पुष्पावस्था पर कटाई	17.86	.....	.....	18.21	.....
फली बनने पर कटाई	19.93	.....	.....	18.52	.....

इस समस्या के समाधान हेतु जायद ऋतु में कुछ प्रमुख चारे के रूप में उगाई जाने वाली फसलें निम्नलिखित हैं :

- एक दाल वाले मौसमी चारे (एक वर्षीय) ज्वार, मकचरी, मक्का, सूड़ान घास, बाजरा इत्यादि।
- एक दाल वाले बहुवर्षीय चारेः हाथी घास, पारा घास, नन्दी घास, गिनी घास इत्यादि।
- दो दाल वाले प्रमुख चारेः लोबिया, ग्वार, मोंठ इत्यादि।

बाजरा चारे की बालियां निकलने की अवस्था

वर्गीकरण के बाद यह आवश्यक हो जाता है कि जायद में जो भी चारे उगाये जाएं उनमें वांछित गुण अवश्य होने चाहिए ताकि चारा अच्छी गुणवत्ता और भरपूर मात्रा में मिल सकें।

जायद चारा फसलों के वांछित गुण

- शीघ्र व ऊंची बढ़ने वाली फसलें।
- चारे में प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेट पर्याप्त मात्रा में होने चाहिये।
- चारे में विषैले पदार्थों का अभाव हो।
- चारा स्वादिष्ट एवं पाचनशील हो।
- पौधों में पत्तियां अधिक, लम्बी एवं मुलायम तथा तना रसीला हो।
- हरे व सूखे चारे की पैदावार अधिक हो।
- फसलों की जड़ों का विकास अच्छा हो जिससे खाद एवं पानी का उचित उपयोग हो सके।

इस प्रकार उन्नत सस्य विधियां अपनाकर चारा उगाया जाये तो पशुओं को अधिक व पौष्टिक चारा मिल जायेगा। परीक्षणों से यह देखा गया है कि दूध देने वाले एवं बोझा खींचने वाले

पशुओं को अगर प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेट युक्त चारा खिलाया जाये तो उनकी कार्यक्षमता एवं दुग्ध उत्पादन क्षमता 25–30 प्रतिशत तक बढ़ायी जा सकती है, साथ ही दाने पर किया जाने वाला खर्च भी कम हो जायेगा। सारणी में जायद चारों में पौषक तत्वों का विवरण दिया गया है जिससे पता चलता है कि उत्पादन के साथ–साथ पोषक तत्व भी उचित मात्रा में हो तो पशुओं को पोषक तत्वों की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध हो जायेगी। जायद ऋतु में पौष्टिक चारों का उत्पादन बढ़ाने के लिये अन्य सस्य विधियों के साथ–साथ समय पर बुवाई और सही ढंग से बुवाई, भूमि एवं उन्नत किस्मों का चुनाव, खाद की संतुलित मात्रा का प्रयोग, सिंचाई एवं कटाई प्रबन्धन करना जरूरी हैं।

जलवायु एवं भूमि

जायद ऋतु के चारों की सामान्य वृद्धि के लिये 25 –30 सेन्टीग्रेड तापमान एवं वायुमण्डल में उचित आर्द्रता होना आवश्यक है, तथा भूमि का तापमान 15–20 सेन्टीग्रेड होने पर बीज का अंकुरण अच्छा होता है। जलवायु के साथ–साथ दोमट, बलुई दोमट तथा औसत, भूमि जिसका जल–निकास अच्छा हो तो जायद ऋतु के चारों की पैदावार के लिए अच्छी मानी जाती है। ऊंची–नीची भूमि में सिंचाई करना काफी कठिन होता है इसलिए खेत को समतल करना अति आवश्यक है। भूमि का पी.एच.मान 6.5 से 7.5 तक चारे की पैदावार के लिए सबसे अच्छा माना जाता है।

उन्नत किस्में

जायद ऋतु में चारे की अच्छी पैदावार लेने के लिए जलवायु व भूमि के अनुसार उन्नत किस्मों का उगाना अत्यन्त आवश्यक है। इन दिनों में चारे की वही किस्में लगायी जायें जो कम समय में तैयार हो जाये, खाद की पूरी मात्रा सहन करने की शक्ति रखती हों, अधिक उपज देने वाली हों एवं साथ ही साथ सघन खेती के रूप में आसानी से ली जा सकें। जायद के चारों की ऐसी किस्मों का चुनाव करें जिनमें विषैले पदार्थों की मात्रा कम हो। जैसे–बाजरे में आक्जैलिक अम्ल और ज्वार में हाइड्रोसायनिक अम्ल (धुरीन) की कम मात्रा हो ताकि गर्मियों में हरा–चारा खिलाने पर पशुओं में विषैले पदार्थ का प्रभाव न पड़े। अगर इस दृष्टि से देखा जाये तो ज्वार की ऐसी उन्नत किस्में अनुसंधान द्वारा निकाली जा रही हैं जिनमें हाइड्रोसायनिक अम्ल की मात्रा बहुत ही कम होती है और पशुओं को गर्मियों में हरा चारा आसानी से खिलाया जा सकता है।

मक्का एवं लोबिया की मिश्रित चारा फसलें

खेत की तैयारी

जायद ऋतु में हरा चारा उगाने के लिए खेत की मिट्टी का भुरभुरा होना अति आवश्यक है ताकि बीज का जमाव अच्छा हो सके। प्रायः देखा गया है कि एक या दो बार हैरो या कल्टीवेटर चला कर खेत को बुवाई के लिये तैयार कर लिया जाता है। इसके बाद खेत की अच्छी तरह पलेवा कर देनी चाहिए। 4–5 दिन के बाद जब भी खेत बत्तर में आये या जुताई करने योग्य हो जाये तो हैरो या कल्टीवेटर चला कर, साथ ही पाटा लगाकर खेत की नमी को दबा दिया जाता है, यदि हो सके तो पलेवा करने से पहले खेत को समतल कर लेना चाहिए ताकि गर्मियों में सिंचाई करने में असुविधा न हो। इस प्रकार खेत बुवाई के लिए तैयार हो जाता है।

बीज की मात्रा

विभिन्न चारे की फसलों की बीज की मात्रा उसकी किस्म एवं दाने के आकार पर निर्भर करती है। जैसे ज्वार के लिये बीज की उचित मात्रा, किस्म व दाने के आकार पर निर्भर करती है। इसलिए जायद ऋतु में ज्वार की बीज दर 40–60 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर पर्याप्त होती है। जबकि बाजरे की बीज दर 10–12 कि. ग्रा. प्रति हैक्टेयर उचित मानी जाती है। मकचरी, लोबिया और ग्वार की बीज दर 40–50 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर उचित है। मक्का का बीज मोटा होता है इसलिए मक्का का 40–50 कि. ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त होता है। घासों में बीज की दर दाने के आकार के अनुसार अलग–अलग होती है, जबकि हाथी घास को जमीन के साथ से सकर एवं ऊपर से तना काटकर एक मीटर की कतारों में पौधे से पौधे की दूरी 50 से. मी. रखकर लगा दिया जाता है और लगाने के बाद खेत में पानी उसी दिन लगा देना चाहिए।

बुवाई का उचित समय एवं सही विधि

जायद ऋतु के चारे की बुवाई का सही समय मध्य फरवरी से मार्च का महीना माना जाता है, अगर इस समय बुवाई में देरी

की गयी तो मई–जून के महीने में हरा–चारा नहीं मिल पायेगा। इसलिए हरे चारे की अच्छी पैदावार लेने के लिए सही समय पर ही बुवाई करें। इस समय चारे वाली फसलों की बुवाई सदैव कतारों में ही करनी चाहिए और यह भी ध्यान रखें कि बीज की गहराई अधिक न हो। परीक्षणों द्वारा यह पाया गया है कि जायद में चारा फसलों की बुवाई 25–30 से.मी. की दूरी पर कतारों में करने एवं बीज की गहराई 3–4 से.मी. रखने से बीज का बचाव अच्छा होता है और चारे की पैदावार भी अधिक मिलती है। वैसे तो चारे की बुवाई जायद ऋतु में बीज छिटक कर करनी ही नहीं चाहिए क्योंकि गर्मी की वजह से भूमि के ऊपर पड़े बीज का जमाव नहीं हो पाता है। जिससे पैदावार पर बुरा असर पड़ता है, अगर मजबूरी में बीज छिटक कर ही बुवाई करनी पड़े तो बीज की मात्रा 15–20 प्रतिशत तक अधिक रखें और बुवाई सुबह के समय ही करें।

मक्का एवं लोबिया की मिश्रित खेती

जायद ऋतु में चारे की मिलवां फसल लेकर हरे चारे की भरपूर पैदावार व प्रोटीन की मात्रा और सूखे चारे की पाचन शीलता बढ़ायी जा सकती है जैसे मक्का–लोबिया मिलाकर बोने पर चारे में प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट की भरपूर मात्रा मिल जाती है। बुवाई की इस विधि में मक्का की एक लाइन और एक लाइन लोबिया की लेकर एवं दो लाइन मक्का और एक लाइन लोबिया लगाकर भरपूर चारा लिया जा सकता है। यह पद्धति उत्तरी भारत के मैदानी भागों में बहुत प्रचलित है।

खाद एवं उर्वरक

दाल वाली फसलों (लोबिया एवं ग्वार) की जड़ों में ग्रन्थियां होती है जो वायुमण्डल की नाइट्रोजन को जमीन में एकत्र करती हैं और बाद में यह नाइट्रोजन पौधों के बढ़वार के लिये काम आती है। इसीलिये इन फसलों में नाइट्रोजन की कम और फास्फोरस की अधिक जरूरत होती है। परीक्षणों द्वारा यह देखा गया है कि 25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन और 50 कि.ग्रा. फास्फोरस तत्व प्रति हैक्टेयर के हिसाब से दिया जाए तो हरे चारे की भरपूर पैदावार मिलती है। नाइट्रोजन एवं फास्फोरस की यह सारी मात्रा बुवाई के समय ही दी जाए। उर्वरकों के साथ इन फसलों के बीज को जैविक खाद टीका बुवाई से पहले अवश्य लगायें। टीका लगाने से जड़ों में ग्रन्थियां अधिक बनती हैं। जो फसलों की बढ़वार में सहायक होती है। टीका लगाते समय विशेष ध्यान यह रखना है कि टीका लगाने के बाद बीज को धूप में न सुखा कर छाया में ही सुखाया जाए क्योंकि धूप की गर्मी में टीका के जीवाणु मर सकते हैं।

जायद ऋतु में लोबिया एवं मक्का की साथ–साथ खेती

घास कुल वाले चारे जैसे–मक्का, ज्वार, बाजरा, एवं मकचरी को नाइट्रोजन की आवश्यकता दाल वाली फसलों की अपेक्षा अधिक होती है। इसीलिए इन फसलों में 80–90 कि.ग्रा. नाइट्रोजन एवं 35–40 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर फास्फोरस की आवश्यकता होती है। जबकि अन्य घासों में 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर फास्फोरस पर्याप्त होता है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा एवं फास्फोरस की पूरी मात्रा बुवाई के समय ही दे देनी चाहिए और बची हुई नाइट्रोजन की आधी मात्रा एक या दो बार में समयानुसार देनी चाहिए।

सिंचाई प्रबन्धन

जायद ऋतु में चारा फसलों की बुवाई सदैव पलेवा करने के बाद ही करनी चाहिए। बुवाई के बाद पहली सिंचाई 25–26 दिन के बाद करना अति आवश्यक है क्योंकि इस समय नमी की कमी हो गई तो फसल पर बुरा प्रभाव पड़ता है। गर्मियों में तापमान काफी अधिक होता है इसलिए दूसरी और तीसरी सिंचाई हर 20–22 दिन के अन्तराल पर करते रहना चाहिए, क्योंकि समय पर सिंचाई देने से चारे का उत्पादन तो बढ़ता ही है साथ ही चारा अधिक रसीला होने के कारण अधिक स्वादिष्ट होता है। इसके अतिरिक्त ज्वार की पत्तियों व तनों में धुरीन की मात्रा भी काफी कम होती है। अगर बहु कटाई वाली ज्वार लगा रखी है तो 60–65 दिन पर पहली कटाई करके तुरन्त सिंचाई कर देनी चाहिए। इसके बाद दूसरी कटाई के बाद अगर वर्षा न हो तो भी सिंचाई करना न भूलो। इस प्रकार दाल वाले चारे और मक्का एवं बाजरा में 2–3 सिंचाइयों और ज्वार में समयानुसार 4–5 सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है।

निराई – गुड़ाई

वैसे तो जायद ऋतु में चारा फसलों की शीघ्र बढ़वार होने के कारण फसल खरपतवारों को दबा लेती है। लेकिन गर्मी के दिनों में प्रारम्भ में खरपतवार आ जाते हैं जो फसल को काफी नुकसान करते हैं। इसलिए खरपतवार रोकने के लिये पहले तो खेती की जुताई अच्छी प्रकार करनी चाहिए। अगर फिर भी खेत में अधिक खरपतवार दिखाई दें तो 30–35 दिन बाद एक निराई–गुड़ाई करके खेत को खरपतवार रहित बना देना चाहिए।

लोबिया चारे की लहलाती फसल

कटाई प्रबन्धन एवं उपज

जायद ऋतु की चारा फसलों की कटाई का उपज बढ़ाने में बहुत योगदान है। इसलिए कटाई सदैव समय पर ही करनी चाहिए। समय के बाद चारा की कटाई में देरी करने से चारे की गुणवत्ता कम हो जाती है और पशु चारा चाव से नहीं खाते, क्योंकि चारे में रेशा अधिक हो जाता है। समय से पहले कटाई करने से एक तो पैदावार कम मिलती है, जो पशुओं के लिये अति हानिकारक होती है। मक्का के चारे की कटाई भुट्टा बनने पर करनी चाहिये। ज्वार, बाजरा, मकचरी और लोबिया की कटाई, फल आने पर करने से पैदावार अधिक एवं पौष्टिक चारा मिलता है। यदि एक से अधिक कटाई करनी है तो पहली कटाई बुवाई के 50–55 दिन बाद एवं दूसरी और तीसरी कटाई 35–40 दिन के अन्तराल पर करने से चारे की पैदावार तो अधिक मिलती ही है साथ ही साथ चारे में पौष्टिकता अच्छी पायी जाती है। बहु कटाई वाली चारा फसलों में कटाई करते समय यह ध्यान रहे कि कटाई सदैव ही जमीन से 7–10 से.मी. ऊंचाई से करें ताकि फूटाव वाली कलियां न कट पायें और फूटाव अच्छा हो। इसी प्रकार बहुवर्षीय या बहु कटाई वाली घासों की भी कटाई सही समय पर सही ऊंचाई पर करें ताकि पौष्टिक चारा मिल सके। प्रत्येक कटाई के बाद नाइट्रोजन खाद की मात्रा तथा हल्की सिंचाई देना न भूलें।

इस प्रकार यदि सभी उन्नत सस्य विधियां अपनायी जायें, सही उन्नत किस्म का बीज प्रयोग किया जाये, समय पर निराई–गुड़ाई, खाद प्रबन्धन, सिंचाई का उचित प्रबन्ध एवं साथ ही साथ मिश्रित–मिलवां फसल द्वारा पौष्टिक चारे की भरपूर पैदावार जायद ऋतु में ली जा सकती है।

फसलानुसार हरे चारे की प्रति हैक्टेयर औसतन पैदावार अलग–अलग है। जैसे ज्वार की औसतन पैदावार 60–70 टन, बाजरे की पैदावार 40–45 टन, मक्का की पैदावार 40–45 टन, मकचरी की पैदावार 60–70 टन, लोबिया की पैदावार 30–35 टन एवं मोंठ की पैदावार 15–18 टन प्रति हैक्टेयर तक प्राप्त की जा सकती है।

(लेखिका पशु पोषण विभाग, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, पंतनगर में सहायक प्रोफेसर हैं।)

ई–मेल : anshurahul@rediffmail.com

जैव ईंधन में ग्रामीण विकास के लिए अहम, रोजगार की संभावनाएं

बायो–डीजल एक क्षमतावान ऊर्जा है और उसके आधार पर ग्रामीण इलाकों में रोजगार के अवसर पैदा हो सकते हैं। ग्रीन हाउस प्रभाव को कम करने के लिए जैव–ईंधन एक अच्छा विकल्प हो सकता है और इस क्षेत्र में रोजगार सृजन व ग्रामीण विकास की अपार संभावनाएं हैं। मरु विकास कार्यक्रम के अंतर्गत ग्रामीण विकास मंत्रालय ने गांवों में जटरोफा की खेती को प्रोत्साहन देने के लिए पिछले साल 50 करोड़ रुपए का प्रावधान किया था।

पेट्रो ईंधन की कीमतों में तेजी से इजाफा हो रहा हो और जलवायु पर प्रभाव भी पड़ रहा हो तो ऐसे समय में जैव–ईंधन बेहतर विकल्प हो सकता है। किसानों और खेतिहारों के लिए बेहतर वृक्षारोपण सामग्री, उचित परती जमीन, वर्षा आदि अहम पहलू हैं ताकि वे गैर–खाद्य तिलहन की खेती कर सकें। (पसूका)

विटामिन–सी से भरपूर अमरूद

डॉ. राकेश कुमार प्रजापति एवं डॉ.श्यौराज सिंह

अमरूद हमारे देश का एक अत्यंत ही लोकप्रिय फल है। अमरूद की खेती विभिन्न प्रकार की मृदाओं, विभिन्न प्रकार की मौसमी दशाओं में भी की जा सकती है। इसके फल पूरे वर्ष के दौरान उपलब्ध रहते हैं। दूसरे फलों की अपेक्षा यह सस्ता होने के कारण सब लोग इसे खरीद सकते हैं। इसलिये इसको "गरीबों का सेब "भी कहा जाता है। भारत में इसकी खेती उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल एवं गुजरात राज्यों में प्रमुखता से की जाती है। सबसे अच्छे गुणों वाले अमरूद उत्तर भारत में उगाए जाते हैं। उत्तर प्रदेश प्रथम स्थान पर लगभग 50 प्रतिशत अमरूद पैदा करने वाला राज्य है। जबकि दूसरे स्थान पर बिहार आता है। इसमें विटामिन सी लगभग 100 से 260 मिली ग्राम प्रति 100 ग्राम फल में पाई जाती है, जो बार–बार डोस चेरी और आंवले को छोड़ अन्य सभी फलों से अधिक है। इसके प्रति 100 ग्राम फल में 76 प्रतिशत प्रोटीन, 0.2 ग्राम वसा, 14.5 ग्राम कार्बोहाइड्रेट 6.9 ग्राम रेशा, 0.8 ग्राम खनिज लवण, 0.01 ग्राम कैल्शियम, 0.04 ग्राम फास्फोरस, 0.1 ग्राम लौह, 66 कैलोरी ऊर्जा, 30 मिली ग्राम विटामिन बी– 1, तथा 0.2 मिली ग्राम निकोटिनिक अम्ल पाया जाता है।

अमरूद और स्वास्थ्य

- अमरूद का सेवन स्मरण शक्ति बढ़ाता है। जिनकी याददाश्त कमजोर हो, उन्हें अमरूद का सेवन करना चाहिये। स्कूल–कॉलेज में पढ़ने वाले बच्चों के लिये, यह विशेष लाभदायक है। यदि अजीर्ण की शिकायत हो तो अमरूद के पत्तों का रस निकाल लें तथा दो चम्मच शक्कर मिलाकर प्रातः सेवन करें।
- यदि बच्चों के पेट में कीड़े पड़ गये हैं, तो अमरूद में शहद और सेंधा नमक मिलाकर खिलाने से पेट के कीड़े खत्म हो जाते हैं। अमरूद का सेवन रक्त को शुद्ध बनाता है। इसके परिणामस्वरूप रक्त विकार से उत्पन्न कील–मुहांसे, फोड़े–फुंसियां आदि नहीं होते और यदि हो तो नष्ट हो जाते हैं।
- यदि अर्श रोग से पीड़ित हैं, तो यह नुस्खा आजमाएं, पके हुए अमरूद में एक छेद करें तथा उसमें आधा चम्मच अजवाइन चूर्ण भर दें तथा छेद को बन्द करके, गर्म रेत में दबा दें। दस मिनट बाद रेत से बाहर निकाल कर सेवन करें। यदि मुंह में छाले हो गये हों, तो अमरूद के ताजे पत्तों का रस निकालकर तथा उसमें थोड़ा सा कत्था मिलाकर छालों पर लगायें।
- यदि उन्माद का प्रकोप ज्यादा हो तो रोगी को सुबह–शाम पके हुए लाल अमरूद खिलाएं। जिनके शरीर में खून की कमी हो या जो एनीमिया के शिकार हों, उन्हें रोजाना अमरूद का सेवन करना चाहिये। लौह तत्व की प्रधानता होने की वजह से यह रक्त निर्माण में सहायक होता है।
- भांग का नशा उतारने की अचूक दवा है अमरूद। नशा चढ़ने के बाद अमरूद खिला दें, नशा तत्काल उतर जायेगा। यदि पेट में गैस या वायु बनती है तो अमरूद पर सेंधा नमक मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है।
- अमरूद का सेवन खांसी से भी निजात दिलाता है। इसके लिये इसे रेत में भूनकर खाना चाहिये। जुकाम होने पर आग में अमरूद को भून कर तथा नमक लगाकर खाना चाहिए।
- यदि कील–मुंहासे की शिकायत है तो पानी में अमरूद के पत्ते उबाल कर उसमें थोड़ा सा नमक मिलाकर चेहरे पर लगाना चाहिए।
- अमरूद शरीर की रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ाता है। विटामिन सी होने से यह शरीर से विजातीय तत्वों को बाहर निकालकर शरीर की वृद्धि करता है।
- पेट संबंधी विकारों को दूर करने के लिए अमरूद का सेवन करें। इसके बीजों में विटामिन बी की प्रधानता होती है, जो पाचन तन्त्र को सक्रिय बनाता है। यदि मंदाग्नि की शिकायत हो या भोजन के प्रति अरूचि उत्पन्न हुई हो तो अमरूद पर थोड़ा–सा सेंधा नमक डाल कर सेवन करें।
- अतिसार की स्थिति में अमरूद के पेड़ की जड़ को उबाल कर उसका काढ़ा बनाकर सेवन करने से लाभ होता है। यदि माइग्रेन का दर्द सताये तो अमरूद को पीस कर मस्तिष्क पर लेप करने से राहत मिलती है।

अमरूद का बगीचा अतिरिक्त आय का साधन

- दांतों और हड्डियों के निर्माण और उनकी मजबूती के लिये, कैल्शियम व फास्फोरस की आवश्यकता से इंकार नहीं किया जा सकता। अमरूद में ये दोनों ही खनिज पर्याप्त मात्रा में मौजूद होते हैं। इसलिये ये दांतों तथा हड्डियों की मजबूती बढ़ाते हैं। इसी प्रकार यह स्कर्वी रोग से भी बचाता है। अगर पेट दर्द हो रहा है, तो अमरूद के सेवन से लाभ होता है। अगर वायु विकार से पीड़ित है तो अमरूद पर सेंधा नमक लगाकर सेवन करने से लाभ होता है।

अमरूद एक स्वादिष्ट फल है, जिसका उगाना अत्यन्त ही सरल है। यह गृह उद्यानों में भी लगाया जा सकता है। भारत में अमरूद सत्रहवीं शताब्दी में लाया गया है। भारत में इसका क्षेत्रफल अनुमानतः 93,937 हेक्टेयर है। इसका उत्पादन 10,95,309 टन है।

अमरूद की सरल व लाभप्रद बागवानी से लोग परिचित होने लगे हैं। अमरूद की खेती का क्षेत्रफल अधिक बढ़ने की संभावना निम्न कारणों से और भी अधिक हो जाती है।

- मिट्टी और जलवायु के प्रति अमरूद की विस्तृत अनुकूलता।
- कम खर्च पर सरलता से रोपण।
- प्रतिवर्ष अच्छी फसल।
- फलों का अधिक पोषण महत्व।

किस्में

इलाहाबाद सफेदा – फल अण्डाकार, छिलका चिकना, चमकदार तथा पीला होता है। गूदा सफेद, मुलायम स्वादिष्ट एवं मनमोहन होता है जिसमें बीज की मात्रा कम पाई जाती है। यह उत्तर प्रदेश की प्रमुख किस्म है जिसकी खेती देश के विभिन्न भागों में विस्तृत क्षेत्रफल में की जाती है। इसके वृक्ष लम्बे, तथा पत्तियां चौड़ी होती हैं।

चिन्तीदार – इसके फल गोल, अण्डाकार, छोटे, चिकने एवं हल्के पीले रंग के होते हैं जिन पर लाल चिन्तियां पाई जाती है। गूदा मुलायम, सफेद, सुगन्धित व स्वादिष्ट होता है। इसकी भण्डारण क्षमता अधिक होती है तथा फलत सामान्य होती है।

लखनऊ–49 (सरदार अमरूद) – इसके फल मध्यम से बड़े गोला, खुरदरी सतह वाले एवं पीले रंग के होते हैं। इसका गूदा मुलायम, सुवासयुक्त सफेद एवं खटास लिये हुए अत्यन्त स्वादिष्ट होता है। इसमें बीजों की संख्या अधिक, आकार बड़े एवं कड़े होते हैं।

एपिल कलर – सेव की तरह इसका रंग एवं आकार होता है। इसमें फल कम लगते हैं। इसके पेड़ फैलने वाले व मध्यम आकार के होते हैं। फल छोटे गोल, चिकने व आकर्षक होते हैं। इसका छिलका गहरे हरे रंग या गुलाबी रंग का होता है। फलों का गूदा मुलायम सफेद व स्वादिष्ट होता है।

बनारसी सुर्खा – इसका पेड़ ऊपर की ओर बढ़ने वाला तथा अधिक शाखाओं वाला होता है। इसमें बहुत अधिक फलत लगते है। इसके फल नाशपाती की तरह सतह खुदरी, रंग पीला, गूदा लाल, स्वादिष्ट एवं बीज मध्यम आकार के होते हैं।

बेहट कोकोनेट – उ.प्र. के सहारनपुर जिले के बेहट काकोनेट नामक स्थान से विकसित की गयी किस्म है। इसमें शाखायें एवं कलर अधिक होती है। फल गोल, अण्डाकार, बड़े खुरदरी सतह वाले, हरे–पीले रंग के होते हैं।

सुप्रीम माइल्ड फलेस्ड – जैली बनाने के लिये यह उत्तम किस्म है, क्योंकि पेक्टिन एवं खरास की मात्रा अधिक होती है। पेड़ ऊपर की तरफ बढ़ने वाले अधिक शाखायुक्त एवं ज्यादा फलते हैं। फल मध्यम आकार के लम्बे अण्डाकार एवं खटास युक्त, सुवास वाले होते हैं जिसमें बीज की मात्रा मध्यम होती है।

बेदाना – यह बीज रहित किस्म है, जिसमें पेड़ बड़े एवं बहुत अधिक शाखायें देने वाले होते हैं। इसमें फलत कम होती है।

जलवायु एवं मृदा

अमरूद की खेती ऐसी जगह पर की जा सकती है जहां पर सूखी मर्यादित सर्दी तथा गर्मी 100 सेमी या कम वर्षा होती है, जो जून से सितम्बर तक वितरित रहती है। अमरूद का पौधा सूखी दशों से प्रभावित नहीं होता है तथा गर्मियों में 96.1 सेंटी ग्रेड तापक्रम पर खड़ा रह सकता है। लेकिन यह पाले से शीघ्र ही प्रभावित हो जाता है। इसकी खेती हल्की रेती दोमट मिट्टी में जो गुजरात में मिलती है, की जाती है, मध्य प्रदेश में अधिक जल–धारण करने वाली चिकनी मिट्टी में, उत्तरी भारत में गंगा नदी के पास के मैदानों में गहरी एवं शक्तिशाली जलोढ़ मिट्टी में तथा दक्षिण की उथली चट्टानीय भूमि में इसकी खेती की जाती है। अम्लीय एवं क्षारीय मिट्टियों में भी इसकी खेती सफलतापूर्वक की जाती है। गहरी एवं प्रागरिक पदार्थ से परिपूर्ण बलुई दोमट मिट्टी इसकी खेती के लिये सबसे उपयुक्त समझी जाती है।

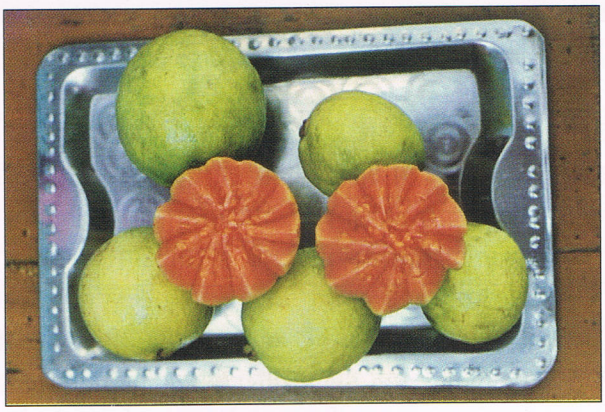

विटामिन सी से भरपूर अमरूद

रोपण

अमरूद को बीज द्वारा या वानस्पतिक प्रसारण द्वारा रोपण किया जाता है। बीज द्वारा पौध तैयार करने के लिये अच्छे पके हुये फलों को लेना चाहिये। फलों के बीज वाले भाग को राख से रगड़कर या हल्के अम्ल के घोल द्वारा बीजों को साफ करके सुखा

लिया जाता है। एक वर्ष से अधिक समय पुराने बीजों को नहीं बोना चाहिये। वर्षा ऋतु में उठी हुई क्यारियां बनाकर व तैयार करके बीजों को 2.5 सेमी दूरी देकर पंक्तियों में बो दिया जाता है। पंक्ति की दूरी 7.5 में 10 सेमी रखी जाती है। जब पौधे 8–10 सेमी लम्बे हो जायें तो उनको 22.5 सेमी आपसी फासला देकर कम दिया जाता है।

वानस्पतिक विधि में अमरूद को शीघ्र प्रसारित करने का स्टूलिंग सबसे अच्छा तरीका है। इसमें पौधे को 15 सेमी की ऊंचाई से काटकर नयी निकाली शाखाओं में छल्ला बनाकर मिट्टी में दबा देते हैं। दबे भाग से जड़े निकल आती हैं। जब पौधा बन जाता है तो काटकर मिट्टी के साथ उठाकर अलग लगा दिया जाता है। पौधे लगाने के लिये 60×60×60 सेमी आकार के गड्ढे तैयार किये जाते है। इन गड्ढों को 15 किग्रा अच्छी सड़ी गोबर की खाद तथा मिट्टी के मिश्रण से भरकर वर्षा ऋतु में पौधों को लगा दिया जाता है। पौधों की दोनों तरफ से आपसी दूरी 4.5 से 7.5 मीटर तथा औसतन दूरी 6 मीटर रखी जाती है।

कृषि क्रियाऐं

अमरूद की खेती में समय पर सिंचाई, निदाई–गुढ़ाई तथा खाद देना चाहिये। पौधों में चारों तरफ पाले बनाये जाते हैं तथा इन्हीं पालों में जाड़ों में 15–20 दिन एवं गर्मियों में एक सप्ताह में अन्तर से सिंचाई करते हैं। वर्षा ऋतु के प्रारंभ में 11.25 किलो ग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद देनी चाहिये। प्रति वर्ष के हिसाब से इतना ही खाद को चार वर्ष तक बढ़ाते रहना चाहिये। अगर मिट्टी अधिक कमजोर होती है तो पौधों के बीच मटर, उर्दू, मूंग बरसीम पैदा की जानी चाहिये। जबकि अच्छी मिट्टी वाले बागों में फूलगोभी, मूली या गाजर पैदा की जा सकती है।

अन्तर्वर्ती फसलें

अमरूद का रोपण 6 से 8 मी. दूरी पर किया जाता है तथा अमरूद में व्यावसायिक रूप से फलन 4–5 वर्ष में प्रारंभ होता है। पेड़ों के भी आपस में मिलने में अधिक समय लगता है, ऐसे में बीच की भूमि का उपयोग कम बढ़वार वाली सब्जियां, दालें आदि उगाकर अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है। अन्तवर्ती फसलें मुख्य रूप से फसल से 0.5 से 1 मी. छोड़कर लेते हैं। इसके लिए अतिरिक्त खाद, उर्वरक इत्यादि की व्यवस्था करें।

खाद एवं उर्वरक

व्यावसायिक खेती के लिए यह आवश्यक है कि अधिक से अधिक उत्पादन लिया जाये और यह बिना खाद उर्वरक के संभव नहीं है। अमरूद के लिए खाद एवं उर्वरक की आवश्यकता किस्म, पौधे की उम्र, भूमि की उर्वरता, जलवायु, प्रबंधन विधि आदि पर निर्भर करती है।

पोटाश और फास्फोरस की सम्पूर्ण मात्राएं वर्ष में एक बार विशेष रूप से नवम्बर में देना अच्छा रहता है। नत्रजन की आधी मात्रा नवम्बर और आधी मात्रा जुलाई में देना चाहिए। वर्ष में तीन बार (फलन से पहले, फल टिकने के बाद और फल वृद्धि एवं विकास) पर मैगनीशियम, जिंक और बोरान को मिश्रित रूप से छिड़काव, प्रत्येक का 0.3 प्रतिशत घोल का छिड़काव करने से अच्छी उपज मिलती है।

कटाई छटाई (कृन्तन)

कृन्तन वह क्रिया है, जिसमें अतिरिक्त शाखाओं को पौधे से काट कर हटा दिया जाता है जिससे पैदावार अधिक होती है। जब पौधे अधिक पुराने एवं आर्थिक रूप से बेकार हो जाते हैं तो मूल कृन्तन की क्रिया की जाती है। अमरूद में वर्ष में तीन बार फूल तथा फलत होती है। इसमें 320–500 फल प्रति पौधा नवम्बर से जनवरी तक फलत मिलती है। इसमें 100 से 300 फल प्रति पौधा फलत मिलती है। इसका समय जून–जुलाई से सितम्बर तक होता है। फरवरी से अप्रैल तक फलत 200–250 फल प्रति फल पौधा मिलती है।

मृग बहार में अच्छी फसल लेने के लिये अम्बे बहार से फूलों को गिरा देना चाहिये क्योंकि इस बहार के फल प्रायः असमान आकृति वाले, आकार में छोटे, कम भी है व रोग ग्रस्त पैदा होते हैं। फूलों को गिरने के लिये नेप्थलीन एसिटिन एसिड 100 मिली ग्राम रसायन 1 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करते हैं।

कीट एवं रोग की रोकथाम

छिलका खाने वाला तना छेदक – यह कीट पौधों का छिलका खाता है तथा तने में छेद बनाकर अन्दर घुस जाता है। इसकी

खाद एवं उर्वरक की मात्रा

आयु (वर्ष) कि.ग्रा.	गोबर की खाद (ग्राम)	नत्रजन (ग्राम)	फास्फोरस (ग्राम)	पोटाश (ग्राम)
1–2	10–15	60	30	30
3	20	120	60	60
4	30	180	90	90
5	40	240	120	120
6	50	300	150	150
7 और अधिक	60	360	180	180

रोकथाम के लिये प्रभावित भाग को साफ करके, छेद में पतले तार की सहायता से क्लोरोफार्म से भीगी रूई को भर देते हैं। पुनः उसे गीली मिट्टी से बन्द कर देते हैं अथवा छिद्रों में पेट्रोलियम या 40 प्रतिशत फार्मलीन डालना चाहिये या पैराडाई क्लोरी बैंजीन का चूर्ण से भरकर उनको चिकनी मिट्टी से बन्द कर देना चाहिये।

फल मक्खी – बरसात के दिनों में यह मक्खी फलों को हानि पहुंचाती है। यह फल के अन्दर अण्डे देती है जिनसे मैगर पैदा होकर गूदे को फल में अन्दर से खाते हैं। ये फल इनसे प्रभावित होकर गिरने लगते हैं। ग्रसित फलों को नष्ट करना तथा 0.03 प्रतिशत फास्फोमिडान का छिड़काव लाभकारी पाया गया है।

कैल्शियम से युक्त कच्चे अमरूद

मिली बग – ये कीड़े नयी कोमल शाखाओं पर चिपके रहते हैं तथा रस चूसते हैं जिससे फूल पैदा नहीं होते हैं। इसके नियंत्रण के लिये एक भाग निकोटिन सल्फेट 600 भाग पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये।

सूखा रोग – उत्तर प्रदेश के मध्य एवं पूर्वी जिलों में इसका प्रकोप अधिक देखा जाता है। यह रोग एक कवक के द्वारा होता है। सर्वप्रथम इसका लक्षण वर्षा ऋतु में दिखाई देता है। रोगी पेड़ों की पत्तियां भूरी हो जाती है तथा पेड़ मुरझा जाते हैं। प्रभावित पेड़ों की डालियां एक–एक करके सूखने लगती हैं और अंत में पूरा पेड़ सूख जाता है। इसकी रोकथाम के लिये कार्बोडाजिक (3 ग्राम दवा) प्रति लीटर पानी में घोलकर गढ्ढ़े में डालना चाहिये या ट्राइकोडरमा नामक फफूंदी को सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर गढ्ढ़ों में डालना चाहिये।

• **कालव्रण (ऐन्थ्रक्नोज)**– यह भी कवक से होने वाला रोग है। इसके प्रभाव से फलों पर काले खुरदरे धब्बे बन जाते हैं तथा फल प्रारम्भिक अवस्था में ही गिरकर सड़ जाते हैं। कभी–कभी रोगग्रस्त फल बहुत बड़े हो जाते हैं। रोगी फलों को तोड़कर जला देना चाहिए तथा 2–3 ग्राम मैकोजेब प्रति लीटर पानी में फल लगने के बाद 10–15 दिन के अन्तर पर 4–5 छिड़काव करने से इसकी रोकथाम की जा सकती है।

कैंकर– यह रोग वर्षा ऋतु की फसल पर अधिकतर पैदा होता है। इसमें फलों पर गोल, काले कठोर–धब्बे पड़ जाते हैं। 4:4:50 बोर्डो मिश्रण (बुझा हुआ चूना–नीला थोथा–पानी) का छिड़काव दो माह के अन्तर पर करना चाहिए। कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के 0.4 प्रतिशत घोल अथवा जिरम के 0.4 प्रतिशत घोल को किसी स्ट्रिकर जैस टेनेक के साथ अगस्त से नवम्बर में 15 दिन के अन्तर से छिड़काव करें।

फलों का सड़ना–यह कवक रोग वातावरण में अधिक नमी के कारण फलों पर होता है। फलों पर पहले पानी भरे धब्बे दिखलाई पड़ते हैं तथा बाद में पूरे फल पर फैलकर उसे गला देते हैं। नियंत्रण के लिये 4:4:50 बोर्डो मिश्रण, या आक्सीक्लोराइड 5.0 प्रतिशत या डाइयेन 2–78 0.02 प्रतिशत के घोल के रूप में पौधों पर छिड़काना चाहिये।

(लेखक कृषि विज्ञान केन्द्र में वरिष्ठ वैज्ञानिक हैं।
ई–मेल : rkiipr@yahoo.com

हमारे आगामी अंक

अप्रैल 2008 अंक वार्षिक बजट (वर्ष 2008–09) व आर्थिक नीतियों पर केंद्रित है।

मई 2008 अंक ग्रामीण पर्यटन पर केंद्रित है।

जून 2008 अंक जल का ग्रामीण जीवन में महत्व पर आधारित होगा।

इसके अतिरिक्त ग्रामीण विकास, कृषि व स्वास्थ्य से संबंधित लेख भी इनमें शामिल किए जाएंगे। उपरोक्त विषयों पर सारगर्भित लेख (आम बोलचाल की भाषा में) व फोटो हमें भेजे जा सकते हैं। पत्रिका के प्रकाशन की तिथि आगामी माह से एक माह पूर्व होती है। अतः प्रकाशन सामग्री एक माह पूर्व हमें मिल जानी चाहिए।

प्रकाशन विभाग के विक्रय केंद्र : दिल्ली सूचना भवन, सीजीओ, काम्प्लैक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003, हॉल न. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली– 110054; **मुंबई** 701 बी विंग, 7वीं मंजिल, केंद्रीय सदन बेलापुर, नवी मुंबई– 400614; **कोलकाता** 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कोलकाता–700069; **चेन्नई** 'ए' बिंग, राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई– 600090; **तिरुअनंतपुरम** प्रेस रोड, निकट गवर्मेंट प्रेस, तिरुअनंतपुरम – 695001; **हैदराबाद** ब्लॉक नं. 4 प्रथम तल, गृहकल्प काम्प्लैक्स, एम.जी. रोड, नामपल्ली, हैदराबाद–500001; **बंगलौर** प्रथम तल, एफ विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर –560034; **पटना** बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना–800004; **लखनऊ** हाल नं.1, द्वितीय तल, केंद्रीय भवन, सैक्टर एच, अलीगंज, लखनऊ–226024; **अहमदाबाद** अम्बिका काम्प्लैक्स, प्रथम तल, पालदी, अहमदाबाद– 380007; **गुवाहाटी** हाउस नं. 07, चेनीकुथी , न्यू कालोनी, के.के.बी. रोड, गुवाहाटी – 781003.

30 जनवरी को बापू के बलिदान दिवस पर उन्हें श्रद्धा-सुमन

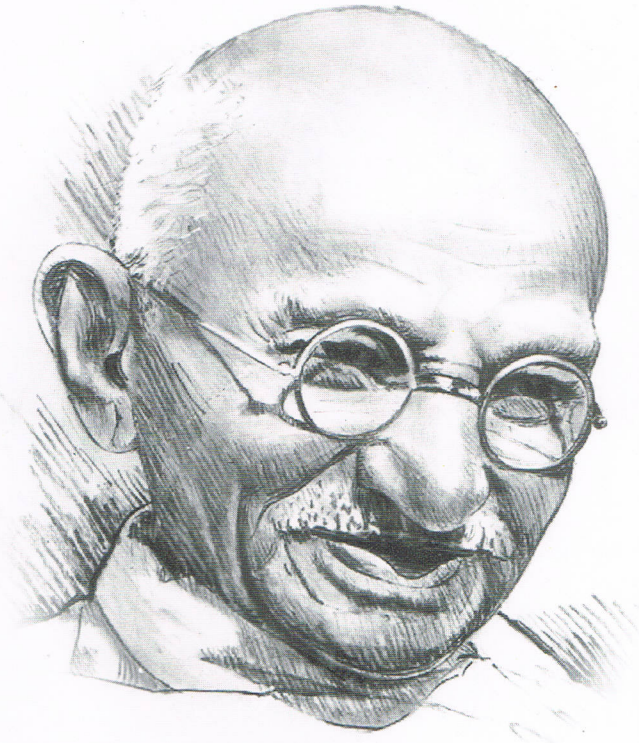

"....मेरा विश्वास है और मैं हर बार यही कहूंगा
कि भारत चंद शहरों में नहीं
बल्कि गांवों में बसता है....."

महात्मा गांधी

ग्राम स्वराज **उनका स्वप्न था**
आइए, इसे साकार करने का पुनःसंकल्प लें

सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

davp22202/13/0140/0708

KH-03/08/1

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (ऍस)-05/3164/2006-08
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)-55/2006-08

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2006-08
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2006-08
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, अपर महानिदेशक (प्रभारी), प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : वरिष्ठ संपादक : कैलाश चन्द मीना